

राजसिंह

उच्चकोटि का मौलिक ऐतिहासिक नाटक

आचार्य चतुरसेन

प्रभात प्रकाशन

दिल्ली • मथुरा

प्रकाशक :

शिवचरनलाल गुप्ता

प्रभात प्रकाशन

२०५, चावड़ी बाजार,

दिल्ली-६.

०

लेखक :

आचार्य चतुरसेन

०

सर्वाधिकार सुरक्षित

०

सन् १९६१ ई०

०

मुद्रक :

बलवीरसिंह बघेल

जवाहर प्रिंटिंग प्रेस,

नौगजा, मथुरा.

०

मूल्य :

मात्रे तीन रुपया

नाटक के पात्र

पुरुष पात्र

राजसिंह	...	उदयपुर के राणा
जयसिंह	...	राणा के कुँवर
भीमसिंह	...	"
रावत रघुनाथसिंह	...	राणा के सरदार
" भेषसिंह	...	"
" केतारीसिंह	...	"
" जमराज	...	"
" भावसिंह	...	"
राठौर जोषासिंह	...	"
महाराज मनोहरसिंह	...	"
" दनसिंह	...	"
" घरिसिंह	...	"
भाला चन्द्रसेन	...	
दुर्गादास राठौर	...	जोधपुर के राजा के सरदार
मीनक	...	"
पनहसिंह	...	राणा का दीवान
धनन्त मिथ	...	रूपनगर का ग्रह्मण
गरीबदास	...	राणा का पुरोहित
रूपसिंह	...	रूपनगर के राजा
रामसिंह	...	"
विश्वसिंह	..	"

प्रकाशक :

शिवचरनलाल गुप्ता

प्रभात प्रकाशन

२०५, चावड़ी बाजार,

दिल्ली-६.



लेखक :

आचार्य चतुरसेन



सर्वाधिकार सुरक्षित



सन् १९६१ ई०



मुद्रक :

बलबोरसिंह वघेल

जवाहर प्रिंटिंग प्रेस,

नीगजा, मथुरा.



मूल्य :

साढ़े तीन रुपया

नाटक के पात्र

पुरुष पात्र

राजसिंह	...	उदयपुर के राणा
जयसिंह	...	राणा के कुँवर
भीमसिंह	...	"
रावत रघुनाथसिंह	...	राणा के सरदार
" मेघसिंह	...	"
" केगरीसिंह	...	"
" जमराज	...	"
" भावसिंह	...	"
राठौर जोधसिंह	...	"
महाराज मनोहरसिंह	...	"
" दलसिंह	...	"
" धरिसिंह	...	"
भाला चन्द्रसेन	...	"
दुर्गादास राठौर	...	जोधपुर के राजा के सरदार
गोनक	...	"
पतहसिंह	...	राणा का दोबान
धनल मिश्र	...	रूपनगर का ब्रह्मण
गरी म्दाम	...	राणा का पुरोहित
रूपसिंह	...	रूपनगर के राजा
रामसिंह	...	"
विक्रमसिंह	..	"

धौरंगजेव	...	दिल्ली का बादशाह
मकबर	...	शाहजादे
मुमज्जम	...	"
इसकाताजख़ाँ	...	शही सिपहसालार
तहमुरख़ाँ	...	"
दिलेरख़ाँ	...	"

सिपाही, प्यादे, नौकर, किसान, नागरिक, दास,
दासी वगैरा ।

“ स्त्री पात्र

कृष्णकुँवर	...	“ राणा राजसिंह की रानी
चारुमती	...	रूपनगर की राजकुमारी
निर्मला	...	चारुमती की सखी
जेवुन्निता	...	बादशाह की बेटो
उदयपुरी	...	बादशाह की बेगम
कमलकुमारी	...	जयसिंह की रानी
गुहागमुन्दरी	...	रत्नसिंह की रानी

दासी, बाँदी आदि ।

महाराणा राजसिंह राजपूताना के प्रकाशमान नक्षत्र थे । उन्होंने समस्त राजपूत-शक्ति के निस्तेज होने पर भी अपनी आत्म-शक्ति और साधारण सत्ता से प्रबल-प्रतापी मुगल बादशाह औरंगजेब का बड़ी मुस्तेदी और योग्यता से भुकाबिला किया । राजसिंह की विरोधता, राजपूतों की वह प्राचीन प्रसिद्ध जूझ मरने का भावना नहीं, अपितु बिलक्षण सेना-नायकत्व रण-पाण्डित्य, दूरदर्शिता और माहस है । उन्होंने अस्तंगत राज-पूत-सत्ता को एकबार अपने पराक्रम से फिर से उभारा । उन्हीं की बदौलत औरंगजेब की बढ़ती हुई हिन्दू-मन्दिरों के विध्वंस की प्रवृत्ति रुकी । उन्हीं की सहायता और आश्रय पाकर राठौरों ने विपत्ति-सागर से उद्धार पाया और अन्त में मुगल-तख्त का भाग्य उनके हाथ का खिलौना बना । राजसिंह ने बड़ी-से-बड़ी राजनैतिक विपत्तियाँ अपने सिर पर दूसरों के लिए लीं । जजिया के विरोध में उनका औरंगजेब के नाम लिखा हुआ प्रसिद्ध पत्र उनके माहम और भोज का परिचायक है । वे अपने युग में हिन्दुत्व का प्रतिनिधित्व करते थे । उनका जीवन एक हिन्दू प्रतिनिधि के नाते उस काल के समस्त भारत के हिन्दुओं में अप्रतिम था । उनके व्यक्तित्व से हिन्दुओं को बहुत जीवन मिला था । कहना चाहिए कि आधुनिक उदयपुर की गद्दी की दृढ़ता का बहुत अंश तक राजसिंह ही कारण हैं ।

उनका जन्म सन् १६२६ में २४ सितम्बर को हुआ । और सन् १६५२ की १० वीं अक्टूबर में २३ वर्ष की आयु में गद्दी

(४)

श्रीरंगजेव	...	दिल्ली का बादशाह
धरुवर	...	शाहजादे
मुद्रजम	...	"
इक्काताजखी	...	शही सिपहसालार
तहबुरखी	...	"
दिलेरखी	...	"

सिपाही, प्यादे, नौकर, किसान, नागरिक, दास, दासी वर्ग ।

“ स्त्री पात्र

कृष्णकुंवर	... “	राणा राजसिंह की रानी
आरुमती	... “	रूपनगर की राजकुमारी
निर्मला	...	चारुमती की सखी
जेवुनिता	...	बादशाह की बेटी
उदयपुरी	...	बादशाह की बेगम
कमलकुमारी	...	जयसिंह की रानी
मुहागमुन्दरी	...	रत्नसिंह की रानी

दासी, बाँदी आदि ।

महाराणा राजसिंह राजपूताना के प्रकाशमान
 नक्षत्र थे। उन्होंने समस्त राजपूत-शक्ति के निस्तेज होने पर भी
 अपनी आत्म-शक्ति और साधारण सत्ता से प्रबल-प्रतापी मुगल
 बादशाह औरंगजेब का बड़ी मुस्तैदी और योग्यता से मुकाबिला
 किया। राजसिंह की विरोधता, राजपूतों की वह प्राचीन प्रसिद्ध
 जूझ मरने का भावना नहीं, अपितु विलक्षण सेना-नायकत्व रण-
 पाण्डित्य, दूरदर्शिता और माहम है। उन्होंने अस्तंगत राज-
 पूत-सत्ता को एकबार अपने पराक्रम से फिर से उभारा। उन्हीं
 की बदौलत औरंगजेब की बढ़ती हुई हिन्दू-मन्दिरों के विध्वंस
 की प्रवृत्ति रुकी। उन्हीं की सहायता और प्राथम पाफर राठौरों
 ने विपत्ति-सागर से उधार पाया और अन्त में मुगल-सत्त का
 भाग्य उनके हाथ का गिलौना बना। राजसिंह ने बड़ी-से-बड़ी
 राजनैतिक विपत्तियाँ अपने मिर पर दूसरों के लिए लीं।
 जजिया के विरोध में उनका औरंगजेब के नाम लिखा हुआ
 प्रसिद्ध पत्र उनके माहम और घोड़ का परिचायक है। वे
 अपने युग में हिन्दुत्व का प्रतिनिधित्व करते थे। उनका जीवन
 एक हिन्दू प्रतिनिधि के नाते उस काल के समस्त भारत के
 हिन्दुओं में अप्रतिम था। उनके व्यक्तित्व से हिन्दुओं को बहुत
 जीवन मिला था। कहना चाहिए कि प्राधुनिक उदयपुर की
 गद्दी की दृढ़ता का बहुत अंश तक राजसिंह ही कारण हैं।
 उनका जन्म सन् १६२६ में २४ सितम्बर को हुआ। और
 सन् १६५२ की १० वीं अक्टूबर में २३ वर्ष की आयु में गद्दी

नशीनी हुई। उसी वर्ष उन्होंने थो एकलिंगजी में जाकर रत्नों का तुलादान किया, जो भारतवर्ष के इतिहास में एकमात्र उदाहरण है। सन् १६५३ की ४ फरवरी को उनका राज्याभिषेक हुआ और चाँदी का तुलादान किया। इसी अवसर पर शाह-जहाँ ने उन्हें राणा का खिताब, पाँच हजारी जात और पाँच हजार सवारों का मनसब देकर जड़ाऊ तलवार, हाथी, घोड़े वगैरा भेजे। परन्तु राजसिंह ने गद्दी पर बैठते ही चित्तौड़ के किले की मरम्मत शुरू कर दी। इस खबर को सुनकर शाहजहाँ अजमेर हवाजा की दरगाह की जियारत करने के वहाने से आया और अब्दालवेग को किले की मरम्मत देखने को भेजा। और जब उसने लौटकर बताया कि पश्चिम की ओर सात दरवाजों की मरम्मत कर ली गई है और कई नवीन दरवाजे बना लिए गए हैं। जो जगहें ऐसी थीं जहाँ चटना सम्भव हो सकता था वहाँ दीवारें गड़ी कर ली गई हैं। तब बादशाह ने सादुल्लाखान वजीर खाना को तीस हजार फौज के साथ तमाम मरम्मत उद्धाने के लिए भेजा। उस समय राणा ने लड़ना उचित न समझा बाद-शाह से माँगी माँगली और पाटवी कुँवर को जिनका नाम बादशाह ने गीभाग्यसिंह रखा था, भेज दिया। बादशाह ने कुँवर को छः दिन पास रखकर हाथी, घोड़ा और सिरोंपाव देकर बिदा किया। परन्तु ज्योंही शाहजहाँ बीमार पड़ा और शाहजादों में गद्दी के उत्तराधिकार की गड़बड़ चली कि इस सुयोग से लाभ उठाकर राणा ने अपने पुराने परगने वापिस ले लिए। और जो-जो हिन्दू सरदार सादुल्लाखान के साथ चित्तौड़ का किला उद्धाने आए थे, एक-एक को भली-भाँति दण्ड दिया गया। उधर समूह के युद्ध में दारा का भाग्य फूटा और दाप को कैद करके और झुंजेव तरत पर बँठा। वह पहले ही से राणा को

मिलाने को खट-पट करता रहा या। विजयी होने पर उसने राणा को पद-वृद्धि कर छः हजार जात व छः हजार सवार का फरमान भेजा और पाँच लाख रुपए तथा एक हाथी और हथिनी भेजी। साथ ही कुच्छ परगने वापिस कर दिए। राणा कूटनोतिज और रङ्गजेव के इस व्यवहार पर पिघल गए और दारा की मदद न की। हालाँकि उसने सिरोही में शरण लेने के बाद राणा को एक करण पत्र लिखा था। अगर उस समय महाराणा और राठीर जमवन्तसिंह मिलकर दारा की सहायता करते तो भारत के इतिहास का कुछ और ही रङ्ग होता।

अस्तु ! इधर राणा अपने भीतरी मंगठन में लगे, उधर औरंगजेव ने अफ़टक हो अपने हाथ-पैर निकाले। उमकी मुन्ला वृत्ति और पक्षपातपूर्ण शासन तथा पिता और परिवार के साथ किए दुर्व्यवहार के कारण हिन्दुओं में काफी अमन्तोष फैल गया और घटनाचक्र से राजसिंह बादशाह के भागे कोप-भाजन बन गए। राजसिंह को परिस्थिति में विवश हो भारी-भारी शाही अपराध करने पड़े। उन्होंने बादशाह की मगेतर रूपनगर की गजनन्या से व्याह किया। गोवधन के गुमांडियों को नाथद्वारा और फांकीरीली में आश्रय दिया। जमवन्तसिंह के पुत्र को शरण दी। सबसे अधिक बादशाह को जजिया के विरुद्ध उपदेश दिया। इन सब कार्रगों से रष्ट्र होकर बादशाह अपनी समस्त सेना को ले मेवाड़ पर चढ़ दी। परन्तु दुर्गम अरावली की गोद में मेवाड़ का राजवंश और जनता आश्रय पाकर अल्पकाल होने पर भी बादशाह को तंग करने में मफल हुए।

सन् १६७६ की ३ मितम्बर को बादशाह ने महाराणा से सड़ने के लिए दिल्ली से प्रस्थान किया और तेरह दिन कूच करके अजमेर में भानामागर पर पड़ाव डाला। शाहजादा अक-

वर जो पालम में मुकीम था, पहले ही अजमेर को खाना कर दिया गया था। बादशाह की चढ़ाई की खबर पाते ही राणा ने अपने प्रमुख सरदारों को बुला युद्ध-सभा की। इस सभा में कुं० जयसिंह, कुं० भीमसिंह, रावल, जसराज, (झुंजरपुर का) राणा-यत भावसिंह (म० अमरसिंह के पुत्र सूरजमल का तीसरा पुत्र) महाराज मनोहरसिंह, (म० कर्णसिंह के पुत्र गरीबदास के पुत्र) महाराज दलसिंह, (म० कर्णसिंह के छोटे पुत्र छत्रसिंह के पुत्र) अरिसिंह (महाराणा के भाई) अरिसिंह के चार पुत्र (भगवानसिंह सुभागासिंह, फतहसिंह, गुमानसिंह) रावल सबलसिंह चौहान (बेदले वाला) भाला चन्द्रसेन (बड़ी सादड़ी वाला) रावल केसरीसिंह और उसका पुत्र गंगादास (वानसी वाले) भाला जैतसिंह (देलवाडे का) पँवार वैरिसाल (बीजोकिया का) रावल महासिंह (वेगुंवाला) रावल रत्नसिंह (सलूवर का) सावलदास (बदनौर का) रावल मानसिंह (कानीड़वाला) रावल केसरीसिंह (पारसीली का) महकमसिंह (भोंडरवाला) राठौर दुर्गादास, राठौर सौनक, विक्रम सोलंकी, रावल रुवमांगद (कोठारिए का) भाला जसयन्त (गोगूंदे का) राठौर गोपीनाथ (घाणोरवा का) राजपुरोहित गरीबदास, मेहता अमरसिंह (नीमड़ी का) खीची रामसिंह, डोडिया महासिंह, मन्त्री दयासदास और अबूमलिक अजीज उपस्थित थे।

सलाह यह ठहरी कि सब कोई पर्वतों में चले जाय और दस्तियाँ उजाड़ दी जाय। पचास हजार भील और बहुत से भोमिए सरदार यहाँ राणा से आ मिले। नेणवारा (भोमट) में राणा का परिवार मुकीम हुआ। राणा के पास सिर्फ बीस हजार सवार और पच्चीस हजार पैदल थे। राणा ने घाट-घाट और नाके-नाके पर ऐसा बन्दोबस्त कर दिया कि पद-पद पर दायुग्रों का रास्ता रोक जाय और उनका सजाना और रसद लूट ली जाय।

२७ अक्टूबर को बादशाह ने तहबुरखाँ सेनापति को गंडल आदि परगने जप्त करने और हसनअली को राणा से लड़ने भेजा। हसनअली के पास सात हजार सेना थी। १ दिसम्बर को वह स्वयं भी उदयपुर को और चल दिया। उसके साथ योरोपियनों का तोपखाना भी था—बंगाल से शाहजादा मुअज्जम भी अपनी सेना सहित आ गया था। देवारी की घाटी में वहाँ के रक्षकों से बादशाह का युद्ध हुआ जिसमें राठीर गोरसिंह मारे गए और रावत मानसिंह घायल हुए। घाटी पर बादशाह का अधिकार हो गया। यहाँ से बादशाह ने राणा के पीछे पहाड़ों में हसनअलीखाने की बड़ी सेना के साथ भेजा और शाहजादा मुअज्जम को खानेजहाँ सादुल्लाखाने और इककताजखाने के साथ उदयपुर भेजा। वहाँ सब जगह मुसमान था। इककताजखाने और सादुल्ला ने महलों के आगे बने प्रसिद्ध (जगदीश-मन्दिर को तोड़ डाला। बीस माँचा तोड़ राजपूत तो वहाँ तैनात थे, वे एक-एक करके मारे गए। बादशाह ने भी उदयपुर पर के तीन मन्दिर ढहवाए। हसनअली ने राणा का पीछा करके उस पर हमला किया और बहुत-सी रसद और सामान लूटकर बीस ऊँटों पर लादकर बादशाह की सेवा में भेजा और एक ही बहत्तर मन्दिर ढहाए। बादशाह ने खुश होकर उसे बहादुर आलमशाही का खिताब दिया। बादशाह ने चित्तौड़ के घामगास तिरंगठ मन्दिर गिरवाए और शाहजादा अकबर, हसनअलीखाने, मुअज्जमखाने रजौउद्दीनखाने को चित्तौड़-रक्षा का भार दे अजमेर लौट आया। बादशाह के सौतेले ही राजपूतों ने शाही खाने लूटने शुरू कर दिए। जिससे मुगल-सेना की व्यवस्था बिगड़ गई और उनका आतंक उस पर छा गया। इसी बीच राणा ने बहुत-सी शाही रसद लूट ली और शाही खाने बर्बाद कर दिए। पलतः पहला घामगास निष्फल रहा।

इसके बाद बादशाहने दूसरी युद्धयोजना यह की कि शाह-जादा आजम चित्तौड़ से देवारी और उदयपुर होता हुआ पहाड़ों में बढ़े और मुप्रज्जम राजनगर से तथा अकबर देसूरी से ! इस घावे में बादशाह ने चित्तौड़, पुर, मांडल, मांडलगढ़, बैराट, भंस-रोड़, मन्दसौर, नीमच, जोरन, ऊँटाला, कपासन, राजनगर और उदयपुर में अपना दखल कर थाने नियत किए । अकबर उदयपुर आया और थो एकलिंग की ओर बढ़ा । रास्ते में नाके-नाके पर लड़ाइयाँ हुईं । इनमें कोठारिए के खर्मागद के पुत्र उदयभान और अमरसिंह चौहान ने बड़ी वीरता दिखाई । उदयभान को वीरता के उपलक्ष में बारह गाँव मिले । हसनअलीखाँ जो पहाड़ों में घुम गया था, परास्त होकर भागा । अब महाराणा ने कुँवर भीमसिंह को गुजरात पर भेजा । उसने ईडर का विध्वंस करके बहनगर को लूटा और चासीस हजार रुपए दण्ड लिए । फिर अहमदनगर जाकर दो लाख का माल लूटा । बादशाह ने मन्दिर गिराए थे, कुँ० भीमसिंह ने तीन सौ के लगभग मन्जिदें ढहाईं । उधर मन्त्री दयालदास ने मालवे पर धावा बोल दिया और नगर-नगर से दण्ड लिया तथा थाने बँटाए, मन्जिदें गिराईं और कई ऊँट सोने से भरकर ले आया । उधर फौजदार रहिन्तामर्षी बारह सौ मवारों सहित ठहरा था । यह इस आक्रमण ने ऐसा घबड़ाया कि सारा सामान छोड़ रातोंरात भाग पड़ा हुआ । इसी भीति शकावत केसरीसिंह के पुत्र गंगदास ने पाँच सौ मवारों के साथ चित्तौड़ के पास पड़ी छावनी पर छापा मारा और अठारह हाथी, दो घोड़े कई ऊँट छीनकर राणा की नजर किए । जिम पर राणा ने उमको कुँवर की पदवी, मोने के जेवर मयेन उत्तम घोड़ा और गाँव देकर मम्मा-

नित किया । इसी भाँति कुँवर गजसिंह ने वेगूँ पर आक्रमण कर वहाँ की शाही सेना को तहस-नहस कर डाला ।

अब कुँवर जयसिंह ने तेरह हजार सवार और बीस हजार पैदल सेना लेकर जिसमें तीस के लगभग बड़े-बड़े सरदार थे, चित्तौड़ की ओर कूँच किया—जहाँ शाहजादा अकबर पचास हजार सेना लिए मुकौम था । जयसिंह ने रात को प्रबल आक्रमण किया और अकबर की सेना को तहस-नहस कर दिया । अकबर हारकर अजमेर को भाग गया । राजपूतों ने हाथी, घोड़े, तम्बू, निगान और नक्कारा छोन लिए । द्वावर्नी में आग लगा दी । यहाँ से भागकर अकबर ने नाडोल में मुकाम किया । वहाँ कुँवर भीमसिंह, राठौर गोपीनाथ और सोलंकी विक्रम ने बारह हजार सेना लेकर उमे घेर लिया, घोर युद्ध हुआ और उसका पूरा राजाना लूट लिया । इस प्रकार इस आक्रमण में भी बाद-शाह विफल हुआ और मुल्ह की बातें शुम्भ कीं । इतिहासकार कहते हैं कि इसी बीच राजसिंह की मृत्यु हो गई । गणा राजसिंह ने जितने बड़े-बड़े काम किए, उन सब में राजममूद्र का निर्माण है, जिनके भीतर सोलह गाँवों को मोमा घाई है । इस तालाब के बनवाने के विषय में इतिहासकार भाँति-भाँति की बातें कहते हैं । कोई कहते हैं कि विवाह के लिए जेगलमंग जाते वक्त नदी के बेग के कारण राजसिंह को दो-तीन दिन खपना पड़ा था, इगनिग् नदी को रोककर उमने तालाब बनवाने का विचार किया । किसी का मत है कि उमने एक पुरोहित, एक रानी, एक कुँवर और एक चारण को भरवा डाला था । जिनका किस्सा यों कहा जाता है कि कुँवर सरदारसिंह को माता ज्येष्ठ कुँवर गुलतानसिंह को मरवा कर अपने पुत्र सरदारसिंह को राज्य दिवाने का प्रबंध रच ग्ही थी—उमने राणा को

कुँवर पर झूठा शक दिलाया जिससे राणा ने सुलतानसिंह को मार डाला । फिर उसी रानी ने एक पुरोहित को पत्र लिखकर राणा को विष देने का पडयन्त्र रचा, पर भेद खुल गया और राणा ने पुरोहित और रानी दोनों को मरवा डाला । इस पर कुँवर सरदारसिंह स्वयं जहर खाकर मर गया । चारण उदय-भानु ने राणा की निन्दा में कविता सुनाई । इससे क्रुद्ध हो उसे मरवा डाला । इन हत्याओं के निवारणार्थ उसने ब्राह्मण से उपाय पूछा और उन्होंने उसे विशाल तालाब बनवाने की सलाह दी । परन्तु कुछ लोगों का यह स्याल है कि अकाल-पीड़ित लोगों को महायत्ना देने के विचार से यह तालाब बनाया गया । सन् १६६५ की १७ अप्रैल को पुरोहित गरीबदास के पुत्र रणछोड़राय के हाथ पंचरत्न के साथ नीब का पत्थर रखवाया गया, और सन् १६७१ की ३० जून को नाथ का मुहुर्त किया गया । फिर सन् १६७४ में लाहौर, गुजरात और सूरत का ब्रना हुआ जहाज डाला गया और सन् १६७६ की १४ वीं जनवरी को प्रतिष्ठा का कार्य शुरू हुआ । अष्टमी को राणा ने उपवास किया और देह-शुद्धि, प्रायश्चित्त आदि करके नवमी को अपने भाइयों, कुँवरों रानियों चाचियों, पुत्रवधुओं, कुटुम्बियों और पुरोहित गरीब-दास सहित मण्डप में प्रवेश कर, देव-पूजन कर हवन किया । उस दिन राणा ने एक-भुक्त रहकर रात्रि जागरण किया । दूसरे दिन नगे पर पैदल सर्परिवार परिक्रमा की । पाँच दिन में चौदह कोम की परिक्रमा समाप्त कर पूर्णिमा को पूर्णाहुति दी और अपने पोते अमरसिंह को साथ बैठाकर स्वर्ण का तुलादान किया, इस तुला में बारह हजार तोले सोना चढ़ा । उसी दिन सप्तसागर दान किया । पटरानी सदाकुँवर ने चाँदो की तुला की । पुरो-हित गरीबदास ने सोने की की । गरीबदास के पुत्र रणछोड़राय

राणा केसरीसिंह पारसोलो वाले, टोडे के रायसिंह की माता और बारहट केसरीसिंह ने चाँदी की तुलाएँ कीं। इस उत्सव में राणा ने पुरोहित गरीबदास को बारह गाँव और अन्य ब्राह्मणों को गाँव, भूमि, सोना, चाँदी तथा सिरोपाव दिए। पण्डितों, चारणों, भाटों आदि को पाँच सौ बावन घोड़े, तेरह हाथी तथा सिरोपाव दिए। मुख्य शिल्पी को २५ हजार रुपए दिए। अन्य चारणों को भी घोड़े दिए। इस उत्सव के उपलक्ष में जोधपुर के राजा जसयन्तसिंह राठौर, अमर के राजा रामसिंह कच्छवाहा, बूँदी के राव भावसिंह हाड़ा, बीकानेर के राजा अनूपसिंह, रामपुरा के चन्द्रावत महकर्मसिंह, जैसलमेर के रावल अमरसिंह, झुंजरपुर के रावल जसवन्तसिंह, रोवा के राजा भावसिंह को एक-एक हाथी, दो-दो घोड़े और जरदोजी सिरोपाव भेजे थे। उत्सव के दरानार्थ बाहर से छियालीस हजार ब्राह्मण और मंगते आए थे जो भोजन-वस्त्र से सन्तुष्ट किए गए। तालाब के बनवाने में एक फरोड़ पचास लाख छियत्तर सौ भाठ रुपए खर्च हुए थे। इसको नौबीकी नामक बाँध पर नाकों में पच्चीस बड़ी-बड़ी शिलाधों पर पच्चीस सर्गों का राजप्रशस्ति महाकाव्य गुदा है जो भारतभर में सबसे बड़ा शिलालेख है। इसकी रचना तैलंग गुमाई मधुमदन के पुत्र रणछोड़ नट्ट ने की थी।

इस तालाब के अलावा महाराणा ने सर्व ऋतुविलास नामक एक महल अपने कुँवरपदे में बनवाया था जिसमें बावड़ी और बाग भी हैं। देवारी के घाटे का कोट और दरवाजा तैयार कराया। उदयपुर में अम्बा माता का मन्दिर बनवाया, रंगसागर तालाब बनवाया जो पीछे पीछोले में मिला लिया गया। कांच रोली का द्वारकाधीन का मन्दिर और राजनगर कस्बा बनाया। एकलिंग के पास बाने इन्द्रसर के पुराने बाँध की जगह नया

बाँध बाँधा । राणा महादानी था । अपने जन्मदिन और दूसरे भ्रवसरोँ पर वह तुलादान और बड़े-बड़े दान किया करता था । वह महावीर था । उसे कुम्भलगढ़ जाते हुए झाड़ा गाँव में किसी ने भोजन में विष खिला दिया जिससे २२ भ्रवदूबर १६८० में सिर्फ ५१ वर्ष की उम्र में उसका देहांत हो गया ।

महाराणा की १८ रानियाँ थीं, जिनसे ६ पुत्र और १ पुत्री हुई । राणा रणपण्डित, साहसी, वीर, निर्भय, सच्चा क्षत्रिय, बुद्धिमान, धर्मनिष्ठ और दाता था । उसमें क्रोध की मात्रा अधिक थी । वह स्वयं कवि और विद्वानों का सत्कार करने वाला था । किसी कवि ने राणा की प्रशंसा में श्लोक लिखा है—

सप्रामे भीम भीमो, विविध वितरणे यदच कर्णोपमेवः ।
 सत्ये श्रोधर्मं सूनुः, प्रबल रिपु जये पायं एवापरोयम् ॥
 श्रीमान्वाजीन्द्र शिक्षा नय विधि कुशलः शास्त्रतत्वेतिहासे ।
 देवोऽयं राजसिंहो जयतु चिरतरं पुत्रपौत्रैः समेतः ॥१॥

राजसिंह

पहिला अङ्क

पहिला दृश्य

[स्वान—उदयपुर का एक प्रधान बाजार : समय—प्रातःकाल :
दो नागरिक सड़क पर खड़े बातचीत कर रहे हैं। बाजार
शन्दनवार धीरे पत्राकाशों से सजा हुआ है।]

पहिला नागरिक—रत्नतुला ! सुना तुमने ?

दूसरा नागरिक—सुनने की एक ही कही। मैं इन्हीं घासों से
देखकर आ रहा हूँ।

पहिला नागरिक—सच। तो तुम थी एकलिङ्ग गए थे ?

दूसरा— नहीं तो क्या, तुम्हें तो मालूम ही है, वहाँ मेरी साली
का घर है। वही जो.....

पहिला— (बात काटकर) तो तुमने महाराणा का रत्नतुला
घपनी घासों से देखा ?

दूसरा— घरे भाई ! कह तो दिया देखा-देखा। हमने ही नहीं,
हजारों ने देखा, जिसने देखा दंग रह गया।

पहिला— दंग रह जाने की ही बात है भाई ! भला तुमने कहीं इतिहास-शास्त्र-पुराण में पढ़ा-सुना है, किसी राजा ने रत्नतुला किया है ?

[एक ब्राह्मण रामनाभी मोड़े घाता है]

ब्राह्मण— शास्त्र-पुराण पढ़ने की बात कौन कह रहा है भाई !

पहिला— हम कह रहे हैं जी । हमने तुमने शास्त्र-पुराण में कहीं पढ़ा-सुना है ?

ब्राह्मण— अरे ! हमने शास्त्र-पुराण में नहीं पढ़ा तो क्या, तूने पढ़ा है ? मूर्ख, शास्त्र-पुराण पढ़ना क्या यों ही होता है ।

पहिला— पढ़ा है तुमने ब्राह्मण देवता ?

ब्राह्मण— (लाल धाँसें करके) नहीं पढ़ा है हमने ? दुष्ट, हमें मूर्ख समझता है ।

[दो-चार धीरे नागरिक घाते हैं]

सय— क्या झमेला है जी ?

ब्राह्मण— यह शूद्र कहता है, हमने शास्त्र पुराण नहीं पढ़ा ।

पहिला— हम शत्रिय हैं, शूद्र नहीं । हाँ, कहे देते हैं ।

दूसरा— देवताजी, तुम नाहक विगड़ने लगे । यह किसने कहा कि तुमने शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा ।

ब्राह्मण— हैं हैं, हमने शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा । अरे, १८ वर्ष काशी में हमने क्या भाड़ भोंका है । शास्त्र-पुराण नहीं पढ़ा । हैं हैं !!

राजसिंह

- सय— अजी, भगड़ा क्या है ?
- पहिला— रत्नतुला । रत्नतुला ।
- सय— कौंसी रत्नतुला ?
- पहिला— नहीं जानते, हमारे महाराणा राजसिंह ने श्री एक-
लिङ्ग में जाकर रत्नतुला की है ।
- सय— हमारे महाराणा साक्षात् देवता के अवतार हैं । उनके
शरीर में निच का तेज है, वे जो करें सो थोड़ा ।
- पहिला— पर मैं कहता हूँ, किसी ने सुना है कि कलियुग में
किसी राजा ने रत्नतुला दान की हो ।
- सय— नहीं सुना, नहीं सुना । स्वर्णतुला श्रीर चाँदी की
तुला मुनी है । रत्नतुला नहीं मुनी ।
- पहिला— (आगे तरेर कर ब्राह्मण से) तुमने सुना है कहीं ?
कलियुग में.....
- ब्राह्मण— (बानों पर हाथ धरके) नारायण, नारायण, नहीं सुना ।
- पहिला— सतयुग में, त्रेता में, द्वापर में ।
- ब्राह्मण— नहीं सुना भाई, नहीं सुना ।
- पहिला— कहीं पुराण-शास्त्र में देखा-पड़ा है ?
- ब्राह्मण— नहीं पड़ा, नहीं देखा । रत्नतुला करके श्री महाराणा
राजसिंह ने अपूर्व कृत्य किया है ।
- पहिला— यही तो हम कहते थे, तुम बिगड़े क्यों ?
- ब्राह्मण— हम समझे, तुम हमें मूर्ख समझते हो, हम काशी में
१८ वर्ष.....

पहिला— भाड़ में जाय तुम्हारे १८ वर्ष, तुमने हमें शूद्र कहा ।

सब लोग—अरे भाई, जाने दो, जाने दो ।

पहिला— नहीं कहो, हम शूद्र है ? (आस्तीन चढ़ाता है)

ब्राह्मण— नारायण, नारायण । अजो, तुम ठाकुर हो भैया !
हम से भूल हुई ।

सब लोग—हाँ जो, तो महाराणाजो का रत्नतुला तुमने देखा है ?

पहिला— देखा नहीं तो क्या ! कह तो रहे हैं । इन्हीं आँखों से देखा है । हीरा, मोती, मानिक और लालों के ढेर देखकर आँखें चौंधयाती थीं । बड़े-बड़े राजा-महाराजा सरदारों ने यह महायज्ञ देखा । देखते-देखते राणा के शरीर-बराबर रत्न तोल कर ब्राह्मणों और दरिद्रों में बाँट दिए गए ।

सब— धन्य, धन्य ! वाह ! क्यों नहीं, राजसिंह-सा नरपति होना दुर्लभ है ।

एक— 'होनहार विरवान के होत चीकने पात' आप लोग देखना महाराणा राजसिंह के हाथों बड़े-बड़े काम होंगे ।

ब्राह्मण— हमने महाराणा की जन्मलग्न देखी है । महाराणा परम प्रतापी विजयो वीर हैं ।

[नैपथ्य में गात्रे-वात्रे और बन्दूकों के छूटने का शब्द]

पहिला— सो भाई ! महाराणाजी की सवारी आ रही है । आओ, हम भी दर्शन कर लें ।

[राणाजी घोड़े पर सवार सब सरदारों सहित आते हैं]

सब लोग—(हर्ष से) जय, महाराणा राजसिंह की जय । हिन्दू-
पति हिन्दूसूर्य राणाजी की जय । श्री एकतिङ्ग के
दोवान की जय ।

[पर्दा खदलता है]

दूसरा दृश्य

[रायन—चित्तौड़ का रिता : मंदान में महाराणा राजसिंहजी
अपने सरदारों सहित लड़े बातें कर रहे हैं ।]

महाराणा—तो यह सबर विल्फुल सच है ?

रायन रघुनाथसिंह—(हाथ जोड़कर) पृथ्वीनाथ ! सेवक को
विश्वस्त भूत्र से सबर मिली है.....

महाराणा—कि समू नगर की लड़ाई में मुराद और और औरंग-
जेब की सम्मिलित सैन्य ने दारा को परास्त कर
दिया ।

रायन रघुनाथसिंह—जी हाँ, महागज ! और इसके बाद औरंग-
जेब ने कोशल से मुराद को कैद करके मस्लीमगढ़ में
भेज दिया है और बड़े बादशाह को आगरे के किले
कैद कर लिया है ।

महाराणा—दारा अब कहाँ है ?

रायन रघुनाथसिंह—वह पहिले पंजाब भाग गया था । पर
औरंगजेब ने ताचड़-नोड़ डगवा पीछा किया । अब

वह कच्छ गुजरात होता हुआ सिरोही में मुकीम है।
 वहाँ से उसने अन्नदाता के नाम एक खरीता भेजा
 है।

महाराणा—खरीते में क्या लिखा है ?

दीवान फतहचन्द—वह लिखता है कि हमने राजपूतों पर अपनी
 लाज छोड़ी है और हम सब राजपूतों के मेहमान
 होकर आए हैं। आप सब राजपूतों के सरदार हैं।
 इसलिए आपसे आशा है कि आला हजरत को कंद
 से छुड़ाने में हमारी मदद करेंगे।

महाराणा—(टण्डी हाँस लेकर) अभाग्य दारा ! श्रीरंगजेब की
 क्या खबर है ?

दीवान फतहचन्द—दारा के पीछे पंजाब जाते वक्त उसने एक
 निशान भेजकर श्रीमानों का पद बढ़ाकर ६ हजारी
 जात व ६ हजार सवार कर दिया है। साथ में ५
 लारा स्पए तथा एक हाथी और हथिनी भेजी है,
 और फर्मान भेजा है कि बदनीर, माण्डलगढ़ और
 बाँसवाड़ा दखल करलें और पाटली कुँवर को
 शाही सिदमत में भेज दें।

राणा— (मुस्करा कर) देखा जायगा। क्या मोहकमसिंह
 माण्डल से अभी नहीं लौटा ?

रावत मेयसिंह—लौट आया है अन्नदाता ! माण्डलगढ़ को वाद-
 शाह जाटजहाँ ने रूपनगर के राजा रूपसिंह को दे

दिया था। उसकी तरफ से महाजन राधवदास वहाँ का किलेदार तैनात है। मोहकमसिंह ने उसे बहुत समझाया, पर वह लड़ने-भरने को तैयार है, गड़ नहीं देता।

राणा— (भोंठों में बल आनकर) बनेड़ा और माहपुरा वालों से तो मामला तँ हो गया न ?

रायत मेघसिंह—जो हों, अन्नदाता ! उन्होंने २६ हजार रुपए और माहपुरा वालों ने २२ हजार रुपए दंड देकर घाधीनता स्वीकार कर ली है। जहाजपुर, सावर, केकड़ी और फूलिया के टिकाने भी घाधीन हो गए हैं।

राणा— बहुत गूब, मालपुरे और टोडे का समाचार कैसा है ?

रायत मेघसिंह—मोहकमसिंह शत्रुघ्न ने मालपुरे को ६ दिन तक लूटा और भारी खजाना हजूर में हाजिर किया है। रायसिंह की माशा ने ६० हजार ०० देकर घाधीनता स्वीकार करली है, वीरगदेव के नगर को उगने जलाकर खाक कर दिया है।

राणा— उगरी मरवगी अब सही न जाती थी, भागा है वह सीधा हो जाएगा। हँ टोंक, लालमोट और साम्भर ?

रायत मेघसिंह—गोनवी दलपत ने उन टिकानों को परास्त कर सबसे दण्ड उगाहा है, वह भीघ्र श्रीमानों की सेवा में हाजिर होकर कैफियत निवेदन करेगा।

राणा— डूंगरपुर टिकाने में मरवगी की थी न ?

रावत मेघसिंह—घणीखम्मा, अन्नदाता के प्रताप से रावल समरसिंह का मिजाज अब ठिकाने लग गया है, उसने १ लाख रुपया, १० गांव, देशदाण और १ हाथी, १ हथिनी नजर कर आघीनता स्वीकार की है।

राणा— शरणागत को अभय। उसे १० गांव, देशदाण और २० हजार रुपए छोड़ दिए जाएँ। आज ही हमारी ओर से तसल्ली का फर्मान रावलजी को भेज दिया जाय।

रावत मेघसिंह—जो आज्ञा दरवार।

राणा— देवलिए का मामला कैसे तय होगा ?

दीयान फतहचन्द—यह सेवक देवलिए पर गया था। रावत हरीसिंह भागकर बादशाह के पास चले गए हैं। पर उनकी माता ने अपने पोते प्रतापसिंह को सेवा में भेज दिया है। साथ में ५ हजार रु० और एक हथिनी दण्ड में दी है। आगरे में सहायता का कोई रंग-ढंग न देखकर रावत हरीसिंह, रावत रघुनाथ सिंह की मारफत शरण में आने की विनती करते हैं।

राणा— (गम्भीरता से) इस मामले पर पीछे मसलहत होगी। अभी हमें बहुत-बुद्ध करना बाकी है। जिन-जिन ठियानेदारों ने बज़ीर सादुल्ला के साथ मिलकर चित्तौड़ की मरम्मत ढहाने में सहयोग दिया था, उन सबको दण्ड मिल गया। पर चित्तौड़ की मरम्मत

का गिराया जाना मेरी आँखों में झूल-सा चुभ रहा है । (वेचनी से धूमता है, फिर टहकर) परन्तु यही समय है ।

दीवान फतहचन्द—श्री महाराज की क्या इच्छा है ?

राणा— दिल्ली का भुगल तहत डगमगा रहा है । प्राप्ति, सुयोग पाकर राजपूताने की नींव दृढ़ कर लें । आप लोगों की महायता से हमने गत १०० वर्षों से खोए हुए इलाके अपने राज्य-काल के प्रारम्भ ही में हस्त-कर लिए हैं । अब हमें अजेय निस्तीड़ की मरम्मत करनी है और अपने बाकी इलाके आधीन करने हैं । इसके बाद समस्त राजपूत-शक्ति को जाग्रत करके उसे हम एकीभूत करेंगे । यह सब श्री एकलिंग भगवान की कृपा से अवश्य होगा ।

रावत मेघसिंह—(हाथ जोड़कर) पृथ्वीनाथ ! भालमगीर के स्वरीते का क्या होगा ?

राणा— भालमगीर कौन ?

रावत मेघसिंह—श्रीरंगजेव ने बादशाह होकर अपना नाम भालमगीर और दस्तगौर रखा है ।

राणा— (हँसकर) ओह, समझा । कुंवर मुल्तानसिंह को काका अमरसिंह के साथ भेंट भलाई देकर दिल्ली भेज दिया जायगा । वे बादशाह भालमगीर को तरतनगोनी और विजय की वधाई दे पाएँगे । (शुद्ध



रावत रघुनारायसिंह—किस लिए नहीं कर सकते ? क्या प्राण रहते हम अन्याय सहन करेंगे ? क्या हमारे शरीर में धाप्पा रावल का रक्त नहीं है ? क्या हमारी तलवार मोथरी हो गई है ? हमारी कलाई में क्या उसे पकड़ने की शक्ति नहीं रही ?

रत्नसिंह—यह सबकुछ अभी है, परन्तु शत्रु के लिए । स्वामी के लिए नहीं । ठिकाना स्वामी ने दिया है, यह ले भी सकता है ।

रावत रघुनारायसिंह—स्वामी ने क्या भीषण में दिया है । इतिहास में क्या घाग के अक्षरों में मत्स्यवती चूड़ाजी के त्याग की कथा नहीं लिखी है ? यदि हमारे पूर्वज चूड़ाजी इच्छा से गद्दी का त्याग न करते तो आज राणा के पद पर मेरा अधिकार था । परन्तु, हमारे धरा का इतना ही त्याग नहीं है । उमने सदैव सर्व-प्रथम सिर फटाकर मेवाड़ की रक्षा की है । उसका आज यह बदला कि हमारा ठिकाना छीना जाना है—हमारी मेवाड़ों का यह पुरस्कार ?

रत्नसिंह—पिताजी ! हमारे पूर्वजों ने मेवाड़ के लिए जब ऐमे-ऐमे बड़े त्याग किए, तब क्या हम इतना त्याग भी न कर सकेंगे ?

रावत रघुनारायसिंह—त्याग ? शनैः तूम त्याग कहते हो—यह अन्याय है । इसे हम सहन नहीं करेंगे । जब तक

मेरे हाथ में तलवार और शरीर में प्राण हैं, सलूम्वर की सीमा पर किसकी सामर्थ्य है जो दृष्टि करे । मैं रक्त की नदी बहा दूँगा । मेवाड़ के सभी सरदार राणा के इस घन्याय के विरोधी हैं ।

रत्नसिंह—यह सच है । परन्तु यह समय गृहकलह का नहीं । राणाजी के कान शत्रुओं ने भर दिए हैं । उनके विचार दीघ्र ही पलट जाएँगे ।

रावत रघुनाथसिंह—तो तुम चाहते हो कि ठिकाना पारसीली वालों को सौंप दिया जाय ।

रत्नसिंह—महाराणा की आज्ञा का पालन होना चाहिए ।

रावत रघुनाथसिंह—परन्तु मैं आज्ञा-पालन नहीं करूँगा ।

रत्नसिंह—तो राणा की सेना बलपूर्वक ठिकाने को खाली करने आएगी ।

रावत रघुनाथसिंह—मैं उसमें युद्ध करूँगा ।

रत्नसिंह—उसमें आपकी पराजय होगी ।

रावत रघुनाथसिंह—जो हो, सो हो ।

रत्नसिंह—स्वयं रक्तपात होगा ।

रावत रघुनाथसिंह—मैं उसका जिम्मेदार नहीं ।

रत्नसिंह—गृहकलह में राज्य की दक्षिण दीण होगी ।

रावत रघुनाथसिंह—उसका फल राणा भोगेगे ।

रत्नसिंह—नहीं, उसका फल मेवाड़ को भोगना होगा । पिताजी, मैं ऐसा नहीं होने दूँगा ।

रावत रघुनार्थसिंह—तुम क्या करोगे ?

रत्नसिंह—मे आपको युद्ध न करने दूँगा ।

रावत रघुनार्थसिंह—पर मैं युद्ध करूँगा ।

रत्नसिंह—तब मैं राणाजी को और से आप से लड़ूँगा ।

रावत रघुनार्थसिंह—तुम मुझसे लड़ोगे ? तुम ? मेरे पुत्र ?

राजपूताने में किसी ने सुना है, बेटा बाप से लड़े ?

रत्नसिंह—अब लोग मुन लेंगे ।

रावत रघुनार्थसिंह—यही तुम्हारी पितृभक्ति है ।

रत्नसिंह—जी हाँ, पिताजी ! आपके सम्मान की रक्षा के लिए

मैं आपसे लड़ूँगा ।

रावत रघुनार्थसिंह—मेरे सम्मान की रक्षा के लिए ?

रत्नसिंह—जी हाँ, उससे मेवाड़ के सरदार युद्ध से विरत रहेंगे

और यह रक्तपात टल जाएगा ।

रावत रघुनार्थसिंह—अच्छा, मैं युद्ध नहीं करूँगा ।

रत्नसिंह—पिताजी ऐसा ही होना चाहिए ।

रावत रघुनार्थसिंह—ऐसा ही होगा । परन्तु मैं मेवाड़ का स्वाग

करूँगा । इस अन्यायी राज्य में मैं एक क्षण भी

नहीं रहूँगा ।

रत्नसिंह—पिताजी, सब बात सोच लीजिए ।

रावत रघुनार्थसिंह—तुम्हारे जेमे भ्राजावारी पुत्र ही जब पिता

के विरोधी हैं, तब और क्या सोचना है । मैं इस

राज्य में न रह सकूँगा ।

राजा— राणा का इतना साहम ? माण्डलगढ़ हमें शाही जागीर में मिला है। मैं इसे सहन नहीं कर सकूंगा। राघवदास ने इतनी जल्दी किला दे दिया ? किला काफी बड़ा था। राघवदाम ने दगा तो नहीं की।

दीवान— नहीं महाराज ! उसने एक मास तक जमकर युद्ध किया और जब तक किले में रमद और सेना रही, उसने मोर्चा लिया। महाराणा राजसिंह ने स्वयं किले पर आक्रमण किया था।

राजा— राणा राजसिंह के पर निकले हैं। एकलिङ्ग पर रत्नतुला करके उसका गर्व बढ़ गया है। पर मैं उसके गर्व को भंजन न करूँ तो मेरा नाम रूपसिंह नहीं। हमें बादशाह के पास भर्जी भेजनी चाहिए।

दीवान— जैसी आज्ञा, पर सेवक का ख्याल है कि भर्जी भेजने से कुछ लाभ न होगा। नया बादशाह अपने ही बहुत से भ्रमों में फँसा है। अभी उसका पैर डगमगा रहा है। फिर मुझे विद्वस्त भूत्र से पता लगा है कि नए बादशाह भालमगीर ने महाराणा को ये परगने दखल करने को शाही फर्मान दे दिया था। महाराज, वास्तव में ये परगने राणा के ही तो थे !

राजा— परन्तु जो परगने शाही सिदमत के बंदने हमें मिले हैं, उनका इस प्रकार हमारे हाथ से निकल जाना

हमारे लिए बड़ी ही लज्जा की बात है। मैं राणा से युद्ध करूँगा।

मन्त्री— (हाथ जोड़कर) महाराज की जो मर्जी हुई, सो ठीक है। परन्तु सेवक का निवेदन यह है कि युद्ध और सन्धि अपना और शत्रु का बलावत्त देखकर ही करना बुद्धिमानो है। राजसिंह की शक्ति प्रबल है और हम उससे पार नहीं पा सकते।

राजा— परन्तु हमारी पीठ पर धाही हाथ है। माण्डलगढ़ को हमसे छीन लेना हमारा नहीं, वादशाह का अपमान है। वादशाह के पास यह सारी हकीकत लिखकर, किसी सुयोग्य आदमी को भेज देना चाहिए।

मन्त्री— जो आज्ञा महाराज ! मेरी सम्मति में महाजन राघवदास ही को इस कार्य के लिए भेजना ठीक होगा। वह वादशाह से सब ऊँच-नीच निवेदन कर आएगा। फिर जैसा अवसर होगा, देखा जायगा।

राजा— अच्छा, अभी यही रहे। पीछे हम स्वयं युद्ध करेंगे।

मन्त्री— तो मैं राघवदास को दिल्ली भेजने का प्रबन्ध करता हूँ।

राजा— हाँ, कीजिए।

[मन्त्री जाता है]

[पदां बदनता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—पेवाड़ का एक गाँव : दो-तीन किमान बँटे भाग ताग रहे हैं

और तमानू पी रहे हैं]

पहिला— मुना भाई तुमने ! राणाजी गोमती नदी के बेंग को रोककर एक बड़ा भारी ताल बना रहे हैं । उसमें सोलह गाँवों की सीमा आएगी ।

दूसरा— गाँवों का क्या होगा ?

तीसरा— हमारी धरती भी यदि ताल में गई तो हम साएँगे क्या ?

पहिला— उमका बन्दोबस्त तो राणाजी करेंगे । राणाजी क्या हमारी जमीन यों ही छीन लेंगे ?

दूसरा— छीन कैसे लेंगे । बदले में जमान मिलेगा, हमने मुना है ।

तीसरा— राक मुना है तुमने । रुपये, मिलेंगे रुपये, समझे !

पहिला— और यदि कोई अपनी धरती न दे तो ?

दूसरा— न कैसे दे ? राजा माँगे और न दे, यह भी कहीं हो सकता है ?

तीसरा— इन ताल से हमारा ही तो लाभ है !

दूसरा— हमारा क्या लाभ है ?

तीसरा— धरे, ताल बनेगा तो हमारी धरती को पानी को कोई दिक्कत ही न रहेगी ।

पहिला— बाह रे भूगर्भ ! धरती जब पानी में डूब जाएगी तब

पानी की जरूरत रही तो क्या—और न रही तो क्या ?

दूसरा— धरती डूबे चाहे न डूबे । हमें क्या ? राणा धरती मांगेंगे तो हमें देना ही होगा—भाई !

तीसरा— ऐसा नहीं है जी ! राणाजी प्रजा की भलाई के लिए ही ताल बना रहे हैं ।

पहिला— सुना है, राणाजी रूपनारायण के दर्शन को जल्द ही इधर आएंगे और तब ताल का मुहूर्त होगा ।

दूसरा— सुनो भाई, राणा राजसिंह राजपूताने में एकछत्र नरपति हैं ।

तीसरा— क्यों नहीं ! ऐसा धीर, वीर, दानी और चतुर राणा मेवाड़ के भाग्य ही से उसे मिला है ।

धीया— तुमने सुना है ? राणाजी की धारण में दूर-दूर से बादशाह के सताए हुए ब्राह्मण, यती, विद्वान् और शूरमा आ रहे हैं । राणा सबका यथा-यत् सम्मान् करते हैं ।

पहिला— धन्य राणाजी ! धन्य मेवाड़ ! राणा राजसिंह से मेवाड़ के भाग्य जाग गए ।

दूसरा— परन्तु भाई, एक दिन बादशाह से गहरी छिनेगी ।

पहिला— तो मेवाड़ तो अपनी गान निवाहेगा ।

तीसरा— इस बार हम भी तलवार पकड़ेंगे, देखना वह बढ़-बढ़ कर हाथ मारें कि जिसका नाम.....

[दो बानरु आते हैं]

एक— काकाजी, हम राणा की फौज में अपनी भर्ती कराएँगे ।

दूसरा— और हम भी । मैंने और करनसिंह ने तलवार के बे-बे हाथ राणाजी को दिखाए कि उन्होंने प्रसन्न होकर हमें यह सोने का कड़ा दिया ।

एक किसान—शाबास पुत्र ! राजपूतों का सच्चा गहना तो तलवार ही है । हल-बल तो ठाली बँटा रजगार है ।

एक नवयुवक—काकाजी, क्षत्रिय के लिए यही धर्म है । आज गुणजी बत्ता रहे थे ।

दूसरा किसान—ठीक कहते हो । जाओ ! अब सो रहो (साथों में) ऐसा प्रतीत हो रहा है कि सोया हुआ भेवाड़ जाग रहा है ।

दोनों युवक—हाँ, काकाजी ! हमने पाठशाला में एक गीत सीखा है । उदयपुर में सब सड़के यह गीत गाते टोली बाँध कर निकलते हैं । आप सुनोगे काकाजी !

किसान—गुनाओ बेटे, सुनूँगा ।

[दोनों बानरु गाने हैं]

अभय रहो भेवाड़ ।

भरावली के दिव्याञ्जल में,

बन-घाटी दुर्गम पथ पूरित—

नभमण्डल के नीचे निर्भय—

मुदित रहो मेवाड़ ।

अभय रहो मेवाड़ ।

हल्दीघाटी के तरु पल्लव,

वीरवरों को अमर कीर्ति का—

मधुर राग गाते भुक-भुक कर

विजय रहो मेवाड़ ।

अभय रहो मेवाड़ ।

[गाते हुए जाते]

[पदां बदलता है]

छठा दृश्य

[स्थान—उदयपुर का सर्व-श्रुतुषितास महल : राजा राजासिंह ।

महारानी कृष्णकुंवर । समय—सन्ध्याकाल]

रानी— स्वामी, क्या यह सच है कि सलूम्वरा सरदार
रघुनारायसिंह ने मेवाड़ त्याग दिया ?

राजा— सच है ! वे अपना धर्म छोड़कर बादशाह के
दिल्ली चले गए हैं ।

रानी— रावत रघुनारायसिंह जैसे चतुर राजनीतिस
मेवाड़ में कम हैं ! महाराज, उनके साथ !
हुआ है । सलूम्वरा का ठिकाना उनके
दादों के रक्त का माल है । आपने वह चीहा

दे दिया ?

राणा— मैं वीर की पूजा करूँगा । पारसीली का केनरसिंह वीर सरदार है ।

रानी— तो आप उन्हें उदयपुर की गद्दी दे सकते थे । अपने सरदार का मान-भंजन वीर-पूजा नहीं । रघुनाथ-सिंह जो प्रकृत वीर हैं ।

राणा— मुझे मालूम हुआ था कि वह मुझसे द्वेष करता है ।

रानी— यह असत्य है—वह राज्य का मक्का सेवक है ।

राणा— उमका बादशाह की सेवा में जाना ही उसे घपराघी प्रमाणित करता है । मुना है, वह बादशाह के कान भरकर उसे मेरे विरुद्ध उभार रहा है ।

रानी— महाराज, दुष्टों ने आपके कान भर आपकी सरदार के विरुद्ध उभाड़ा है । महाराज को बूँडा घोर उमके बंजजों का उपकार यों न भूलना चाहिए था । गद्दी उनकी थी, यह तो आप जानते हैं ।

राणा— परन्तु राणा होने पर तो मुझे घानें गोलकर ही रहना चाहिए ।

रानी— हौं स्वामी, यह मेरी इच्छा है । मैंने सरदार के पुत्र रत्ननिह को बुनाया है ।

राणा— किम निह महारानी ।

रानी— इमीलिए कि उसे बत्ता दिया जाय कि मलूम्वरा का टिठाना उन्हीं का है । आप उमे विद्याग दिलावे

दासी— घड़ी खम्मा अन्नदाता, रावल रत्नसिंहजी ड्योढ़ियों पर हाजिर हैं ।

रानी— उन्हें महीं ले आओ । (राणाजी से) रत्नसिंह को मैं जयसिंह से किसी भांति कम नहीं समझती । वह बड़ा विजयी, वीर और मुशील है ।

[रत्नसिंह आता है]

रत्नसिंह—अन्नदाता की जय हो । सेवक को क्या आज्ञा है ?

रानी— तुमने सलूम्वरा का ठिकाना क्या राव केसरसिंह को सौंप दिया ?

रत्नसिंह— अभी नहीं रानी जी ।

रानी— क्यों ? दरबार ने तो उसका पट्टा उनके नाम कर दिया है । इनमें विलम्ब क्यों ?

रत्नसिंह— पराण सम्मा, रानी मा, राजाज्ञा पालने में मेरी धोर से देर नहीं हुई । मैं स्वयं राव केसरीसिंहजी के पास यह कहने गया था कि वे ठिकाना देखल करलें ।

रानी— रावजी ने क्या कहा ?

रत्नसिंह— उन्होंने कहा, सलूम्वरा ठिकाना चूड़ावतों का है, चूड़ावत मेवाड़ की गद्दी के रक्षक और प्रतिपालक है । उनके ठिकाने पर मैं अधिकार नहीं कर सकता ।

राणा— क्या रावजी ने यह कहा ?

रत्नसिंह— जी हाँ, मरकार । मैंने बहुत ममझाया, परन्तु वे ठिकाना दखन ही नहीं करते ।

रानी— सुना महाराज, अपने सेवकों के विचार ।

राणा— सुना ! (आगे बढ़कर रत्नसिंह को छाती से लगाकर)
वीरवर तू धन्य है । सलूम्वर ठिकाना तुम्हारा है ।
मैं रावत रघुनारायसिंह को लाने को दूत भेजूंगा ।

रत्नसिंह—(राणा के चरण छूकर) दर्बार ! यह तलवार, यह
प्राण, यह शरीर सब स्वदेश पर न्यौछावर हैं ।

राणा-रानी—धन्य वीर, धन्य रत्नसिंह !

[पर्दा बंदमता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—दिन्नी : लाल किले का भीमरी भाग : इबादनगाह का कमरा :
बादशाह घोसा घूम रहा है । समय—प्रातः]

बादशाह— (स्वगत) आज उस सौफनाक वक्त को ६ साल गुजर
गए । जब समूगढ़ के मैदान में दारा की फौज के
मैने धुरे जड़ा दिए थे । बदनमीब दारा, अपने सामने
किसी की न लगने देता था, खाखिर कुत्ते की मौत
मारा गया । आज भी सौफनाक घाँसे नहीं भूलतीं—जब
उमका सिर काटकर मेरे सामने पेश किया गया था ।
पहिले मुझे यकीन ही न हुआ कि यह दारा का सिर
है । मगर फिर मैंने पहिचाना—वह दारा था—वही, जो



कम्बुस्तों के दिल में खौफ की तो जगह ही नहीं है ।
इनके लिए मरना और मारना महुज खेल है ।
(क्रुद्ध गोचकर) पहरे पर कौन है ?

[एक सोजा घाता है]

बादशाह— बजीर असदुल्ला को अभी हाजिर कर ।

सोजा— (कोनिंग करके) जो हुबम खुदाबन्द !

[जाता है]

बादशाह— (दोनों हाथों से मुट्ठी मलता हुआ) यह तो सच है कि
आला हजरत ने और जन्नत नशीन बादशाह जहाँ-
गोर ने हिन्दुओं से मिलकर-राजपूतों की मदद से
हिन्दुस्तान पर हुकूमन की थी, मगर आज वक्त बदल
गया है । हिन्दुस्तान के डम सिरे से उम सिरे तक
दीने-इस्लाम का सितारा बुलन्द है । मैं चाहता हूँ
कि मुल्क में दीन की इज्जत बढ़ाई जाये ।

[बजीर असदुल्ला आने हैं]

बादशाह— जोधपुर की रानी गिरफ्तार हुई ?

बजीर— हुजूर, वह क्रुद्ध राजपूतों के साथ बचकर भाग गई ।
याकी घादमी काट डाले गए । औरतें जल मरीं ।

बादशाह— कौन उसे गिरफ्तार करने गया था ?

बजीर— फौजदार नहुच्चरगाँ गए थे, जहाँपनाह !

बादशाह— और उनके साथ कितनी फौज थी ?

बजीर— पाँच हजार, खुदाबन्द !

बादशाह— राजपूत कितने थे ?

वजीर— ठीक अर्ज नहीं कर सकता । कोई कहते हैं, दो-सौ थे, कोई कहते हैं, पचास थे ।

बादशाह— (मुस्ते से) और उन्हें लेकर रानी ५ हजार शार्ह फौज को कुचल कर चली गई ।

वजीर— जहाँपनाह, देखने वाले कहते हैं कि ऐसा नजा कभी न देखा था । जब रानी बच्चे को पीठ पर बाँध दोनों हाथों से तलवार धुमाती शाही फौज चौरती हुई चली गई । हुजूर ! लोग सक्ते की हाँ में आ गए ।

बादशाह— शर्म की बात है ! जसवंत का लड़का गिरफ्त हुआ ?

वजीर— जी हाँ, मुदाबन्द !

बादशाह— उसे इसी जुम्मे को मुगलमान कर लिया जाय उसका नाम मुहम्मदीराज रखा जाय । उसे इस्तेनालीम देने की नमाम जरूरी कार्यावाहिय जाँए ।

वजीर— जो हुबुध जहाँपनाह !

बादशाह— रानी कहीं गई है, कुछ पता लगा ?

वजीर— वह उदयपुर के राना राजसिंह की पनाह में

बादशाह— (स्पोरियों में बन शवहर) राजा राजसिंह घोर भी निरायत हैं ?

वजीर— जहाँपनाह, खबर मिली है कि उसने वे तमाम इलाके दखल कर लिए हैं जो आला हजरत ने दखल कर लिए थे और चित्तौड़ के किले की मरम्मत जो शाही सुलहनामे के खिलाफ होने से गिरा दी गई थी फिर से करली गई है।

बादशाह— (गोबकर) बहतर ! इस मसले पर फिर गौर किया जायगा। क्या मुल्ला और उल्मा काए हैं :

वजीर— जी हाँ गुदावन्द ! वे सब कदमबोसी के लिए मुन्तजिर सड़े हैं।

बादशाह— उन्हें यहाँ भेज दो और जसवन्तसिंह के इस लड़के का खूब ख्याल रखो।

वजीर— जो हुवम।

[वजीर जाता है]

[गव लोग घाते हैं]

बादशाह— आइए मीलाना ! ऐ सच्चे दीनदारों, रमूले पाक ने हम नाबीज को काफिरों के इस मुल्क का बादशाह बनाया। सो इसलिए कि दीने इस्लाम का भंडा हिन्दुस्तान में बुन्द रहे। अथ मेरे सच्चे दोस्तों आप बताइए कि कैसे यह गवाव का काम अंजाम दिया जा सकता है ?

एक मुन्ता—जहाँपनाह ! गुदा का मुक है कि हुजूर के खयालात दीने इस्लाम को हिफाजत और बहुरदी की और

हैं। इस सवाब के बदले गुदा आपको जन्नत न दे तो मैं जामिन हूँ।

बादशाह— मैं चाहता हूँ कि तमाम मुल्क में दीने इस्लाम की रोशनी फैलाने के लिए युतपरस्ती का खारजा कर दिया जाय। इसलिए हमने तमाम सल्तनत में हुयम जारी किए हैं कि जहाँ जो पुराना मन्दिर हो तोड़ डाला जाय और उस जगह पाक मस्जिद बना दी जाय।

दूसरा मुल्ला—अल्लाह ! क्या सवाब का काम किया है हुजूर ने।

तीसरा— जहाँपनाह सचमुच श्रीलिया हैं।

बादशाह— मैं एक अदना दीन का खादिम हूँ। हाँ, तो इस हुकम की तामील सस्ती से हो रही है और उसे और मुस्तौदो से अमल में लाने के लिए मैंने एक महकमा ही कायम कर दिया है।

सब— सुभान अल्लाह ! सुभान अल्लाह !! जहाँपनाह ने बहुत ही मुनासिब काम किया है।

बादशाह— मैंने तमाम काफिर राजपूतों और हिन्दुओं की जिम्मेदार जगहों से हटाकर, उनकी जगह दीनदारों को दी है।

सब— ऐसा ही होना चाहिए।

बादशाह— अब आप लोग कहिए कि दीने इस्लाम की बहतरी के लिए और क्या किया जा सकता है ?

एक मुल्ला—हुजूर, शरम की मन्ना है कि तमाम हिन्दुओं पर जजिया लगाया जाय, जैसा कि पठान बादशाहों ने हिन्दुओं पर लगाया था। इससे दोन की तरबकी होगी और सजाना भी बढ़ेगा।

बादशाह—इस मसले पर भी गौर किया जा रहा है। मगर हमें खयाल है कि राजपूत और हिन्दू रईम इससे विगड़ जाएंगे।

मुल्ला—मगर जहाँपनाह, जो बस गुदा से खीफ खाते हैं, इन भक्कगर राजपूतों से डर जाने वाले नहीं हैं, जजिया का हुकम तो जरूरी जारी होना चाहिए।

बादशाह—बहतर, मैं जल्द जजिया का हुकम जारी करूँगा। शय आप लोग जा सकते हैं।

राय मुल्ला—शुक्रिया ! भव हमने समझा कि जहाँपनाह झीलिया हैं। हम गुदा से दुम्रा करते हैं कि जहाँपनाह के कदम तरते मुगलिया पर दोने इस्नाम के लिए मुबारक हों।

[जाने हैं]

बादशाह—सल्लनन एक बोभा है और बादशाह उमे दोने वाला गया। ये दोन के मधे मुल्ला सबसे ज्यादा भतरनाक हैं। मगर इनसे ज्यादा वे मगरर राजपूत हैं—जो हर तरह बर्बाद होने पर भी अपनी भकड़ छोड़ना नहीं जानते। उदयपुर का राजा एक भंगारा है। मगर

जोधपुर के राठौर उससे मिल गए तो सल्तनत
 लिए खतरनाक तूफान खड़ा करेंगे। एक वा
 मेर की ज्यारत के यहाने इनको देखना होगा
 [बड़बडाता हुआ]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—रूपनगर का घन्तःपुर : कुछ सहेलियाँ बाग में
 धीर गा रही हैं। सावन की बहार है। समय—प्रातः]

राग-भ्रिभोठी

सखि भूलो श्रीर भुलायो ।
 शीतल पवन चलत पुरवैया ।
 भुक भूमत तह डार-पात—
 भरत-भरत रिमभिम-रिमभिम
 सखि रोम-रोम हर्षाप्रो ॥१॥ सखि
 धरण में घूप धरणेक में वादल ।
 धरण में विजली धरण में रिमभिम ।
 ऋतु मनमोहन पावस धाई
 मन उमग उमगायो ॥२॥ सखि
 हंस-हंस पैय बड़ाप्रो सजनी ।
 गाम्प्रो राग, जगाप्रो सजनी ।

प्रेम-ज्योति के जगमग दीपक ।

उर में आज जलाओ ॥३॥ सखि भूलो०

[परस्पर बातें करती हैं]

- एक— मुनोरी सखियों ! आओ, आज हम राजकुमारी को खूब छकाएँ ।
- दूसरी— क्या करेगी रो तू ?
- पहिली— मैं कहूँगी कि राजकुमारी को ब्याह की फिरा हो रही है ।
- तीसरी— खूब मजा रहेगा । फिर हम पूछेंगी—उन्हें कौनसा दूल्हा पसन्द है ।
- पहिली— उनका दूल्हा मेरे मन में है, पर बताऊँगी नहीं ।
- दूसरी— बता दे सखि !
- पहिली— नहीं बताऊँगी । हम सब जनी मिलकर उन्हीं से पूछेंगी । उन्हें खूब तंग करेंगी ।
- दूसरी— खूब दिल्लगी रहेगी । सुन—(कान में कुछ कहकर) क्यों ? है न यही बात ।
- पहिली— दूर हो पगली, ऐसा भी कहीं हो सकता है ! चुप, वह दासी घा रही है ।
[दासी घाती है]
- दानो— एक बुढ़िया राजकुमारी से मिलने की बड़ी देर से हट ठान रही है । मैंने बहुत कहा, आज कुमारीजी प्रत कर रही हैं । मुलाकात नहीं होगी । पर

सुनती ही नहीं। (हँसकर) उसने मुझे घूँस में मुर्मे की शीशी दी है।

एक सहेली— क्या करामात है, इस मुर्मे में ? देखूँ.....

दूसरी— इसे आँख में लगाने से एक के दो दीखते हैं।

तोसरो— तब तो बहुत भ्रच्छा है, एक शीशी में भी लूँगी

दासी— उस बुढ़िया को क्या कहदूँ ?

पहिली— यह तो कह, वह है कौन ?

दासी— मुसलमानी है ? दिल्ली से आई है, मिस्ती, और तस्वीरें बेचती है। कहती है, राजकुमारों लिए तस्वीरें लाई हैं ?

पहिली— भरी, उसका रंग-रूप कैसा है ?

दासी— मुँह में एक दाँत नहीं, चहरे पर लकीरें ही लक आँखों में सुरमा और मुँह में पान।

पहिली— भरे बाह, उसके यह ठाठ। यहाँ भेजदे उसको ज दिल्ली ही रहेगी।

दासी— बहुत भ्रच्छा।

[जाती]

पहिली— जरा दिल्ली का हाल-चाल ही जाना जायगा। है, मुझा नया वादनाह बड़ा काइयाँ है।

दूसरी— हत्यारा, भाइयों के सिर काटकर तख्त पर है।

पहिली— धुप वह भारही है, शंतान की नानी !

[बुढ़िया घाती है]

एक— बुढ़ी तेरे पोपले मुँह में कितने दाँत हैं ?

बुढ़िया— बेटा, मैं दिल्ली रहती हूँ ।

दूसरी— दिल्ली में बिल्लियाँ बहुत हैं ?

बुढ़िया— मैं तस्वीरें बेचती हूँ, मेरा बेटा मुन्नीखर है ।

पहिली— तू पत्थर है, दिया कंसो तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— (गव को धूरकर) भगर मेरी तस्वीरें तुम्हारे लायक नहीं हैं, यह राजकुमारी के लिए साईं हूँ ।

[सब जोर से हिनगिताकर हँसती हैं]

बुढ़िया— तुम हँसती क्यों हो ?

एक— हँसी की बात ही है (भागें बड़कर) मैं राजकुमारी हूँ, दिया तस्वीर ।

दूसरी— दूर हो, राजकुमारी मैं हूँ, कहीं हूँ तस्वीरें ?

तीसरी— इधर देख, मैं हूँ राजकुमारी ।

बुढ़िया— (रोकर) या गृदा, ये सभी राजकुमारियाँ हैं या एक भी नहीं ।

[गव गिनगिताकर हँसती है । राजकुमारी चारमती घाती है—गव गिनगियाँ थुद हो जाती है]

चारमती— तुम गव दतना क्यों हँस रही हो ?

एक— यहाँ एक दिल्ली की बूढ़ी बिल्ली घाई है ।

बुमारी— बेचारी बुढ़िया को तंग न करो—जीन है यह ?

सुनती ही नहीं। (हँसकर) उसने मुझे घूँस में सुर्मों की शीशी दी है।

एक सहेली— क्या करामात है, इस सुर्मों में ? देखूँ.....

दूसरी— इसे आँख में लगाने से एक के दो दीखते हैं।

तीसरी— तब तो बहुत अच्छा है, एक शीशी में भी छूँगी

दासी— उस बुढ़िया को क्या कहदूँ ?

पहिली— यह तो कह, वह है कौन ?

दासी— मुसलमानी है ? दिल्ली से आई है, मिस्ती, रू और तस्वीरों बेचती है। कहती है, राजकुमारी लिए तस्वीरें लाई हैं ?

पहिली— अरी, उसका रंग-रूप कैसा है ?

दासी— मुँह में एक दाँत नहीं, चहरे पर लकीरें ही लकड़ आँखों में सुरमा और मुँह में पान।

पहिली— अरे बाह, उसके यह ठाठ। यहाँ भेजदे उसको जरा दिल्ली ही रहेगी।

दासी— बहुत अच्छा।

[जाती]

पहिली— जरा दिल्ली का हाल-चाल ही जाना जायगा। सु है, मुझा नया बादशाह बड़ा काइयाँ है।

दूसरी— हय्यारा, भाइयों के सिर काटकर तख्त पर बँ है।

पहिली— शुभ वह धारही है, शंतान की नानी !

[बुढ़िया भाती है]

एक— बूढ़ी तेरे पोपले मुँह में कितने दाँत हैं ?

बुढ़िया— वेदी, मैं दिल्ली रहती हूँ ।

दूसरी— दिल्ली में विल्लियाँ बहुत हैं ?

बुढ़िया— मैं तस्वीरें बेचती हूँ, मेरा बेटा मुसौध्वर है ।

पहिली— तू पत्यर है, दिखा कौसी तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— (गब को धूरकर) भगर मेरो तस्वीरें तुम्हारे लायक नहीं हैं, यह राजकुमारी के लिए लाई हूँ ।

[तब जोर से चिल्लाकर हँसती है]

बुढ़िया— तुम हँसती क्यों हो ?

एक— हँसी की बात ही है (घाने बड़कर) मैं राजकुमारी हूँ, दिखा तस्वीर ।

दूसरी— दूर हो, राजकुमारी मैं हूँ, कहीं हैं तस्वीरें ?

तीसरी— इधर देग, मैं हूँ राजकुमारी ।

बुढ़िया— (रोकर) या गुदा, ये सभी राजकुमारियाँ हैं या एक भी नहीं ।

[गब चिल्लाकर हँसती है । राजकुमारी चारमती भाती है—गब गगियाँ घुर हो जाती हैं]

चारमती— तुम सब इतना क्यों हँस रही हो ?

एक— यहाँ एक दिल्ली की बूढ़ी विल्ली आई है ।

कुमारी— बेचारे बुढ़िया को तंग न करो—गौन है वह ?

एक सखी—वह दिल्ली की तस्वीर बेचने वाली है । चुड़
कहती है, तस्वीरें हमारे लायक नहीं—कुमारीजी
लिए हैं ।

चारुमती—(मुस्करा कर) मेरे लिए जो तस्वीर लाई
दिखाओ ।

बुढ़िया— मैं कुर्बान । कुमारीजी, तुम तो खुद ही एक रास
हो ।

चारुमती— तुम अपनी तस्वीरें तो दिखाओ ।

बुढ़िया— देखो, ये अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, नूरजहाँ
तस्वीरें हैं ।

चारुमती— क्या तुम्हारे पास हिन्दू रानियों की तस्वीरें
हैं ?

बुढ़िया— जी हाँ, हैं । राजा भानसिंह, जगतसिंह और जया
की तस्वीरें हैं, देखिए ।

[निष्कान्त कर देती है]

चारुमती— ये हिन्दू राजाओं की तस्वीरें नहीं हैं, बादशाह
मौकरों की हैं ।

बुढ़िया— (और तस्वीरें निकालकर) यह राणा प्रताप
शमरसिंह, करनसिंह, जसवन्तसिंह की तस्वीरें हैं

चारुमती— हाँ, इन्हें रसदो, इन्हें मैं मोल लूँगी । वह की
तस्वीर तुमने छिपा ली ?

बुढ़िया— माफ कीजिए राजकुमारी ! यह तुम्हारे दुश्मन की तस्वीर है ।

चारुमती— किसकी है, देखूँ !

बुढ़िया— उदयपुर के राना राजसिंह की है । वे तुम्हारे पिता के बंधी हैं ।

चारुमती— वीर राजपूत खियों से बैर नहीं रखते । यह तस्वीर मैं मोल खूँगी । (सखियों से) सगियो, देखो, यह एक सच्चे राजपूत की तस्वीर है । (बुढ़िया से) और किस-किस की तस्वीरें हैं ?

बुढ़िया— देखिए—यह भालमगौर बादशाह की तस्वीर है ।

चारुमती— भजब तस्वीर है । मैं इसे जूते की नोक पर मारती हूँ ।

बुढ़िया— रामोश, भगर बादशाह सुन पाएँगे तो रूपनगर के किले की एक ईंट तक न मिलेगी ।

चारुमती— यह बात है ? सहेलियो, इन तस्वीर पर बारी-बारी से एक-एक सात मारो ।

[नव बारी-बारी ने सात मारती है]

चारुमती— जिसने अपने सगे भाइयों के रक्त में हाथ रेंगे और अपने बूढ़े बाप को कैद करके तन्तेताऊस पर प्रशुन चरण रत्न युगलों के इतिहास को वसंतिकत किया है. उनकी एक राजपूतनी यही प्रतिष्ठा कर मयनी

है । लो, बीस मुहर दाम और बीस मुहर इनाम ।
जाओ ।

[बुढ़िया हबका-बनका होकर जाती है, सहेलिया दंग रह
जाती हैं]

[पर्दा गिरता है]

अङ्क दूसरा

पहिला दृश्य

[स्थान—दिल्ली की जामा मस्जिद के सामने का मैदान : मस्जिद में जुमे की नमाज की घूमघाम हो रही है। घाम रास्ते पर बहुत से हिन्दुओं की भीड़ इकट्ठी हो रही है। बुइसावार सिपाही भीड़ हटाना चाहते हैं। समय—प्रातःकाल]

एक सिपाही—(एक नागरिक से) कौन हो जी तुम ?

नागरिक—क्या मैं ? यह तो तुम अन्दाज से ही जान सकते थे— मेरे एक नाक, दो कान, एक मुँह, दो हाथ, दो पैर हैं, जैसे कि तुम्हारे हैं।

सिपाही— हम पूछते हैं जी कि तुम क्या काम करते हो ?

नागरिक—घरूत से काम करता हूँ। टेढ़ों को सीधा करता हूँ, गीधों को भुका देता हूँ। तुम्हारा बुद्ध काम हो तो पही।

सिपाही— रहते वहाँ हो ?

नागरिक—इसी शहर में।

सिपाही— हिन्दू कि मुसलमान।

नागरिक— हिन्दू ।

सिपाही— तो चलते-फिरते नजर आओ ।

नागरिक— क्यों ? किसलिए ?

सिपाही— हुकम नहीं है ।

नागरिक— क्यों हुकम नहीं है ?

सिपाही— बहस करता है ! बदजात !

नागरिक— गाली मत देना, सबरदार ! जानते हो मैं टेढ़ों को सीधा.....

सिपाही— (धक्का देकर) तो ले—हो सीधा..... ।

[दोनों में गुल्ममधुल्या होती है, भीड़ इकट्ठा होती है]

एक— क्या मामला है, क्या भ्रमेला है ?

नागरिक— मिर्जाजी कहते हैं, चलते-फिरते नजर आओ । गाली देते हैं और मर्दन नापते हैं ।

दूसरा— अन्धेर है अन्धेर गाली क्यों दो जी ?

तीसरा— और हायापाई क्यों की ?

चौथा— यह तो अन्धेरगर्दी है !

पाँचवाँ— बीच बाजार यह जुल्म !

सिपाही— यहाँ यह क्यों खड़ा था ?

नागरिक— सड़क पर सड़े थे, सड़क किसी के बाप का नहीं है ।

दो-चार आदमी— बेताक, धव रास्ते पर लोग चलने-फिरने भी न पावेंगे !

.सब— अन्धेर है, अन्धेर !

सिपाही— हुक्म नहीं है, हुक्म ।

एक— हुक्म क्यों नहीं है ?

सिपाही— जहाँपनाह की सवारी जुमे की नमाज अदा करने को आ रही है, तुम गधे हो ।

दूमरा— (भीड़ में से) गधे तुम हो । हम बादशाह सलामत से अर्ज करने आए हैं ।

सिपाही— किसने हमें गाली दी ! उसे हम गिरफ्तार करेंगे । पकड़ो उसे ।

दो-चार नागरिक—गाली तुमने दी, तुमने ।

[दग-बीग आदमी इकट्ठे हो जाते हैं]

गध— क्या हुआ ? क्या हुआ ?

दो-चार— हंगामा हो गया—जुल्म है, जुल्म ।

दो-चार और—अन्धेर है अन्धेर ।

मुद्द लोग—क्या हुआ भाई, क्या हुआ ?

एक— यह सिपाही कहता है, यहाँ से हट जाओ ।

दो-चार— क्यों हट जाएँ ? हम यहीं जमे रहेंगे ।

एक— हम जहाँपनाह से अर्ज करने आए हैं । अर्ज बिना किए नहीं हटेंगे ।

दो-चार— हम अपनी जान देंगे ।

[एक अफसर धोड़ा दौड़ता हुआ जाता है]

अफसर— यह क्या हंगामा है ?

सिपाही— ये सरकात यागी लोग इकट्ठे हो रहे हैं ।

सब लोग—हम नागरिक हैं। हम जहाँपनाह से अर्ज करने आये हैं।

सिपाही— इन्होंने बादशाह सलामत को गाली दी है। ये सब फसाद करने को आमादा हैं। ये सब वागी है।

सब— हम बादशाह सलामत से अर्ज करेंगे।

अफसर— तुम सबको तोप के मुँह पर उड़वा दिया जायगा।

सब— हम अपनी जान हथेली पर धरे हुए हैं। हम मर भिटोंगे पर अर्ज किए बिना न जाएंगे।

[किले से तोपों की सलामी दागी जाती है]

अफसर— तुम सब लोग भाग जाओ, जहाँपनाह जुमे की नमाज अदा करने तशरीफ ला रहे हैं।

सब— हम हजरत सलामत से अर्ज करेंगे। हम.....

अफसर— (सवारों ने) घोड़े छोड़ दो और राँद डालो बदमाशों को !

[घोड़ों से कूचने जाकर कुछ लोग बिल्लाने हैं। बादशाह की सवारी घाती है। नबीव बिल्लाते हैं]

नबीव— (उच्च स्वर से) रास्ता करो—रास्ता करो—हटो—बचो।

मय— दुहाई गुदाबन्द। हमारी अर्ज सुनी जाय। हम गरीब हिन्दू जजिया नहीं दे सकते।

एक— जजिया हमारे बाप-दादो ने भी कभी नहीं दिया।

दूगरा— जन्नत नगीन जलालुद्दीन अकबरशाह ने उसे माफ कर दिया था। उसके बाद बादशाह जहाँगीर ने और

आला हजरत शाहजहाँ ने भी उसे माफ रखा था ।

सब— (चित्लाकर) जजिया माफ किया जाय । हम नहीं दे सकते—हम नहीं देंगे ।

नकीब— हटो, बचो, रास्ता साफ करो ।

कुछ लोग—सड़क पर लेट जाओ । हम अर्जो बिना मंजूर कराए न हटेंगे ।

[बहत से लोग सड़क पर लेट जाते हैं]

बादशाह— यह क्या हंगामा है ?

मजीर— हुजूर बाहर के हिन्दू जमा हैं ।

बादशाह— (थोरियाँ में बल डालकर) किस लिए ?

मजीर— जजिया के खिलाफ जहाँपनाह की खिदमत में अर्ज करने ।

बादशाह— उन्हें रास्ते से हटाओ ।

मजीर— वे रास्ते पर लेट गए हैं । वे कहते हैं, हम अर्जो कुबूल कराकर हटेंगे ।

बादशाह— (क्रुद्ध स्वर से) उन पर मस्त हाथियों को छोड़ दो ।

[भीड़ पर मस्त हाथी छोड़े जाते हैं । लोग कुचले जाकर धीरज-चित्लाने, रोने-पीटने भागते हैं । कुछ मारे जाते हैं]

[पर्दा गिरता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—ऊदयपुर : समय—मध्याह्न : महाराणा राजसिंह का दरवार : महाराणा गद्दी पर विराजमान हैं । खास-खास सरदार अपने-अपने स्थानों पर बंठे हैं । राठीर दुर्गादास और सैनिक मामने खड़े हैं]

राणा— (शोकपूर्ण स्वर से) तो जोधपुर आज अनाथ हुआ ।
राठीरपति जसवन्तसिंह अब नहीं है ?

दुर्गादास— हाँ महाराणा, अपने देश और मित्रों से दूर जमरुद के किले में उन्होंने वीर प्राण त्यागे ।

राणा— एक मरघर उठ गया (भिर झुका लेते हैं)

दुर्गादास— हम लोग—महाराज ! रानियों और राजपरिवार सहित मारवाड़ लौट रहे थे । लाहौर में हमें रुकना पड़ा । रानी माँ ने वहाँ कुँवर को जन्म दिया ।

राणा— जोधपुर का यह भावी राजा चिरंजीवी हो ।

दुर्गादास— अन्नदाता का आशीर्वाद सच हो । परन्तु हमारी दुर्दशा की कहानी अत्यन्त करुण है ।

राणा— कहो ठाकुर, मेवाड़ राठीर राजवंश की हर विपत्ति में उसके साथ रहेगा ।

दुर्गादास— महाराणा की जय हो । इसी घाणा से मैं दारण घाया हूँ । लाहौर में हमें खबर मिली कि इधर महाराज का स्वर्गवाग हुआ और उधर दिल्ली में

पाटवी कुँवर पृथ्वीसिंह मार डाले गए ।

राणा— (आश्चर्य से) हैं ! मार डाले गए ?

दुर्गादास— (आँसू भरकर) हाँ महाराणा, बादशाह ने उन्हें दरवार में बुलाकर जो खिलत दी थी, वह विप में रंगी थी । कुमार खिलत पहन घर लौट रहे थे कि मार्ग ही में उनका प्राण निकल गया ।

राणा— पिता को कंद और भाइयों को कत्ल करने वाला क्रूर बादशाह जो न करे सो छोड़ा ।

दुर्गादास— यह यज्ञ के समान खबर सुनकर भी हमने नवशिशु के जन्म पर सन्तोष किया, पर हमें तुरन्त ही खबर मिली कि लावारिस होने के कारण जोधपुर खालसा कर लिया गया है और रानियों और राजपरिवार को दिल्ली हाजिर होना चाहिए ।

राणा— यह किसलिए ठाकुर ?

दुर्गादास— बादशाह को विश्वास नहीं हुआ कि रानी को और कुँवर जन्मा है, वह उसकी तस्दीक किया चाहता था ।

राणा— भयश्य इसमें कोई गूढ़ उद्देश्य होगा ।

दुर्गादास— ऐसा ही था, महाराज ! दिल्ली जाकर हम रूपनगर की हवेली में ठहरा दिए गए । वहाँ जाते ही शाही सेना ने हमें घेर लिया और बलपूर्वक कुमार को माँगा । अन्त में हमें प्राणों पर खेलना पड़ा । कुमार

को किसी भांति वचाकर हम मुगल सैन्य की छाती पर पैर रख निकल भागे। महाराणा, इस विपत्ति के समुद्र से मैं, मुकुन्ददास, सोनिंग और महारानी वचीं दोष सब कट मरे—राजवर्ग की सब खियाँ वहीं जल कर खाक हो गईं। पर कुँवर की रक्षा हो गई।

राणा— (कोध और आवेश में) धन्य शूर, धन्य वीर। कुमार और रानी अब कहाँ हैं।

दुर्गादास— भन्नदाता की शरण में।

[सोनिंग को संकेत करना है। वह कुमार शिशु को लाकर राणा की गद्दी पर डाल देता है।]

राणा— (तलवार छूकर) शरणागत को अभय ! ठाकुर दुर्गादास, जब तक मेवाड़ में एक भी वीर तलवार पकड़ने योग्य है तब तक मारवाड़ का यह भावी अधीश्वर मेवाड़ की छत्रछाया में फले-फूले।

दुर्गादास— महाराणा की जय हो। महाराज (बालक को गोद में उठा लेता है) मारवाड़ के शत्रुओं पर आपने बड़ी कृपा की।

राणा— कृपा नहीं दुर्गादास, यह तो धर्मपालन है। जो राजा धर्म का पालन न कर, शरणागत को विमुक्त करे वह अधर्मी है। बादशाह आलमगीर ने प्रारम्भ ही से अनर्थ किया है। उसका राज्वारोहण रक्तशाल और अन्याय से हुआ है। जिस मुगल साम्राज्य की जड़

राजपूतों की तलवारों की सरीदार अकबर, जहाँ-
गौर और साहजहाँ ने मजबूत की—उने यह
खोसती कर रहा है। राजपूताने की जिम वक्त सोई
हुई आत्मा जाग उठेगी तख्त भस्म हो जायगा।

दुर्गादास— महाराणा ! दुर्भाग्य से राजपूताना सौ रहा है।
आत्म-सम्मान और सगठन के भाव उसने भुला
दिए हैं। इसीसे उसकी वीरता में कालिरा लग गई
है। इसे जगाना होगा। महाराज ! आप हिन्दू-
पति हैं। आपकी ओर तमाम राजपूताने की दृष्टि
है। राठीरों की बाँह आपने गही हैं। राठीरों की
तलवारें आपके चरणों में हैं।

राणा— वीरवर, निश्चय रमो। राठीर और सीसीदियों की
शक्ति मितकर मुगल साम्राज्य का विध्वंस कर
देगी, परन्तु अभी हमें समय की प्रतीक्षा करनी
होगी। हाँ, महाराणी अब कहाँ हैं ? मेवाड़ के
राजमहलों की यदि वे शोभा बढ़ायेंगी तो यह
मेवाड़ का सीभाग्य है।

दुर्गादास— धन्यवाद, महाराणा ! रानी मा और हम लोग अब
मारवाड़ को जगाएँगे। हम घर-घर भलग जगा-
एँगे। हम विजितियों की पहाड़ियों को चबनापूर
करेंगे। जबतक हमारा प्यारा जोधपुर स्वाधीन न
हो जायगा।

राणा— धन्य वीर, धन्य राठीर ! अभी मैं जोधपुर के भावी अधिपति के गुजारे के लिए १२ गाँवों सहित केलवे का पट्टा लिख देता हूँ ।

दुर्गादास— महाराणा की जय ! अब हमें आज्ञा हो तो देश-प्रेम और देशभक्ति के जोग साधने की हम घर-घर अलख जगाएँ और ऐसा सरजाम करें जिससे मुगल तख्त एक दिन जल कर राख हो जाय ।

राणा— जाओ वीरवर ! समय पर यह अवश्य होगा ।

[पर्दा गिरता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान—दिल्ली का रङ्गमहल : शाहजादी जेबुन्निमा का खास कमरा : समय—प्रातःकाल : शाहजादी जेबुन्निमा अकेली अस्तव्यस्त अपने कमरे में बैठी है ।]

शाहजादी— (स्वगत) एह जमीन के इम यहिस्त की—जहाँ हवा को भी बिना हुक्म अन्दर आने की ताब नहीं, आज मैं मलिका हूँ । अघ्या पर रोशनधारा के बड़े-बड़े अहमान हैं । कुछ दिन इसी से उसने रङ्गमहल पर हुक्मत की । बादशाह आज्ञाकारी नहीं, रोशनधारा बेगम हैं । मगर वे दिन सद गए । मेरी बेचारी तीन बहनों की रिस्मतें अघ्या ने मेरे बदकिस्मत चचा-

जात कंदी भाइयों के साथ शादी करके बाँध दीं ।
 मगर मैं वह पंछी नहीं जो कैद होकर गूँहूँ । वसन्त
 में भीरा नए-नए फूलों का रस लेता है, गूँजता है,
 वह कंसा प्यारा लगता है । मगर इस अटूट दरिया
 के न धमने वाले बहाव का अंजाम क्या होगा ?
 (कुछ गोबकर) क्या परवाह है, मैं जेबुन्निसा हूँ,
 मुगल बादशाहों के इस रङ्गमहल की रानी मैं हूँ ।
 [बाँधी आती है]

बाँधी— हजरत बेगम साहेबा, बी फितरत हज़ूर की कदम-
 बोसी की रवास्तगार है ।

शाहजादी—जहन्नुम में जाय यह । अभी मुलाकात नहीं होगी ।
 यह आईना इधर कर ।

बाँधी— (आईना गामने करके) खुदाबन्द ! वह कहती है राज-
 पूताने ने बढ़िया मुर्मा आया है ।

शाहजादी—(बौत्कर) यह नो अच्छी खबर मालूम देती है, कौन
 है वह ?

बाँधी— हज़ूर फितरत ।

शाहजादी—उमे यहाँ भेज दे ।

बाँधी— जो हुक्म ।

[जाती है]

जेबुन्निसा—(स्वल्प) फितरत काम की खबर लाती है । देखो,
 इस बार क्या खबर आई है । यह राजपूताने का

सुर्मा क्या माने ? (कुछ सोचकर) राजपूताना ! अजब-
बहशत है इस नाम में ।

(फितरत भाकर जमीन चूमती है)

शाहजादी—इस वक्त क्यों आई शैतान ?

फितरत— हुजूर काम की खबर है ।

शाहजादी— कह ।

फितरत— बख्शीश दें तो कहूँ !

शाहजादी— कह न ।

फितरत— मैं राजपूताना से आ रही हूँ, रूपनगर गई थी ।

शाहजादी— (खोरियों में बल डालकर) फिर ?

फितरत— मेरे पास तस्वीरें थीं, वे मैंने वहाँ की राजकुमारी
को दिखाईं ।

शाहजादी— कौन २ तस्वीरें थीं ।

फितरत— सभी बादशाहों की थीं हुजूर !

शाहजादी— सबर क्या है ?

फितरत— एकदम गुस्ताखाना फेल ।

शाहजादी— कह बदजात ।

फितरत— (हाथ जोड़ कर) गुदाबन्द ! मेरे पास हजरत पीर
दस्तगीर आलमगीर की तस्वीर थी, यह मैंने राज-
कुमारी को दिखाई थी ।

शाहजादी— निजदा किया उसने ।

फितरत— तोबा-तोबा ! हुजूर उसने तस्वीर की तोहीन की ।

शाहजादी- क्या किया ?

फितरत— वह कल्मा जवान पर नहीं ला सकती ।

शाहजादी- तो तुम्हें कुत्तों से नुचवाऊँ ?

फितरत— (गिड़गिड़ाकर) हुजूर शाहजादी ! गुलाम की जान बरहगो जाय तो घर्जं करूँ ।

शाहजादी- कह फिर, हगमजादी ।

फितरत— उस मगरूर काफिर लड़की ने हजरत की तस्वीर पर लात मारी ।

शाहजादी- (घोंककर) लात ?

फितरत— श्रीर यही उनकी सहेलियों ने किया ।

शाहजादी- (होठ चवाकर) फिर !

फितरत— हुजूर, मैं अपनी जान लेकर भागी ।

शाहजादी- (गोषकर) मूयमूरत है वह ?

फितरत— क्या कहूँ हुजूर, तस्वीर की मानिन्द ।

शाहजादी- सिन क्या है ?

फितरत— सरकार, अभी अधतिली कली है ।

शाहजादी- हमसे भी ज्यादा मूयमूरत है क्या ?

फितरत— (दोनों बानों पर हाथ रगकर) तोवा-तोवा ! कहीं हुजूर शाहजादी—कहाँ यह बादी ।

शाहजादी- (हेंगएर) उदयपुरी बेगम की बनिस्वत ?

फितरत— (हेंगएर) हुजूर ! वह चाँद का टुकड़ा है ।

शाहजादी- बरशोश मिलेगो (पुनार कर) कोई है ?

[एक तातारी बाँदी नंगी तलवार लिए घाती है]

बाँदी— हुक्म ।

शाहजादी—रंगमहल के खजाञ्ची पर इस औरत को इनाम का परवाना जारी करने को मोर मुन्शो से कह दे ।
(बुझिया से) दूर हो शैतान ।

[बुझिया और बाँदी जाती है]

शाहजादी—(स्वगत) काम की खबर है । अब उस जजियाना बाँदी का गुरुर मुझे नहीं वर्दास्त होता । इस रंग-महल का वही एक खटका है । वह काफिर भ्रष्टा को अपने चुङ्गल में बुरी तरह फाँसे है । वह भूल गई है, जब बुर्दाफरोशों के हाथ से उसे बदनसीब धारा ने खरीदा था । आज वह मलिका है और मुझे भी उसे सलाम करना पड़ता है । कम्बस्त शूस्तान हर दम धराव में बुत बनी रहती है । उसे खोद निकालने का यह भ्रष्टा खासा जरिया होगा । यह राजपूत मगरूर सड़की अगर बादशाह को बेगम बन सके । (बुछ सोचकर) ठीक है । वह भाग जलाऊँ कि जिसका पार नहीं ।

[सोचती है । पर्दा गिरना है]

चौथा दृश्य

स्थान—मेवाड़ का विनट वन : एक पहाड़ी पहाव : समय—मध्या-
 नाल : भोलों की एक छोटी-सी दस्ती - एक बूढ़ा घरा हुआ
 ब्राह्मण गिर पर बड़ा-सा बोझ लिए घाता है]

ब्राह्मण— घरे भाइयो, इस ब्राह्मण को आज रात आश्रय
 मिलेगा ?

एक भोल—कौन हो तुम ?

ब्राह्मण— ब्राह्मण हूँ, मेरे साथ देवता हैं ।

[गव भोल गटे हो जाते हैं]

एक बूढ़ा भोल—(भाग पड़कर) तुम्हारे साथ देवता है ?

ब्राह्मण— हाँ, भाई !

भोल— कहीं से आ रहे हो ?

ब्राह्मण— कहीं से चलाऊँ भाई । मेरी दुःख की कहानी बहुत
 भारी है । बँटो तो कहूँ । आज रात आश्रय दीगे ?

भोल— आराम में बँटो । भाग जल गही है । देवता को
 गिर से उतार लो ।

[ब्राह्मण गिर में बोझ उतार एक ऊँचा जगह रगता है]

भोल— (निवट घ.कर) घब रहो ।

ब्राह्मण— मैं जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैमलमेर सब राज-
 पूताना घूम आया ।

भोल— गिर गिर ब्राह्मण देवता ?

ब्राह्मण— (गद्गद कण्ठ से) देवता की रक्षा के लिए। जो देवता जगत की रक्षा करते हैं। जिनकी कृपा से मेघ-जल बरसाता है, रात्रि चाँदनी बखेरती है। सूर्य तपता है। दिन सौन्दर्य बखेरता है, आज भारत में उनकी रक्षा नहीं हो सकती। आर्यों की भूमि भारत से धर्म उठ गया।

भील— नहीं, कौन देवता का अपमान करता है। हम उसे मार डालेंगे।

ब्राह्मण— भोले भाइयो! तुम्हारी शक्ति से बाहर की बात है। जिसके भय से राजपूताना धर-धर कांपता है। राजा और महाराजा जिनकी सेवा में खड़े रहते हैं, उसी के भय से मैं देवता के लिए इस द्वार से उस द्वार और उस द्वार से इस द्वार मारा-मारा फिर रहा हूँ—उसी के भय से कोई मुझे आश्रय नहीं देता। तुम भी उससे मेरे देवता की रक्षा नहीं कर सकते? (घाँसों से घामू पीछता है)।

भील— कौन है, वह ऐसा बली?

ब्राह्मण— भालमगौर बादशाह। जिसने बाप को कैद करके और भाइयों को कत्ल करके दिल्ली के तरत को कलबिन किया है। जो मुगलवंश का राहू होकर जन्मा है। उमने हिंदुस्तान के समान मन्दिरों को बह्याना पुरू कर दिया है। देश के बड़े-बड़े प्रसिद्ध

धर्मस्थान ढहकर आज लण्डन ही गए। देवताओं के अङ्ग गण्ड-खण्ड हो गए। पर कोई हिन्दुओं की लाज रखने वाला भाई का लाल ऐसा नहीं जो इस पाप से भारत का उद्धार करे।

भील— (उत्तेजित होकर) ऐसा न कहो। धरती कभी वीर-विहीन नहीं होती है। ऐसा ही एक वीरवर अभी भी पृथ्वी पर है।

ब्राह्मण— कौन है वह ?

भील— महाराणा राजसिंह, मेवाड़ का अधिपति। हिन्दू-सूर्य।

ब्राह्मण— मैंने उनका यज्ञ सुना है और मैं वही जा रहा हूँ। क्या क्षरण मिलेगी ?

भील— अवश्य मिलेगी। तुम्हारे साथ कौन देवता हैं।

ब्राह्मण— द्वारकाधीश हैं। हम लोग गोवर्धन से भागे धा रहे हैं।

भील— ब्राह्मण देवता, स्नान-भूजन करके देवता को भोग लगा कर निमंत्रण विधायक करो। देवता की प्रतिष्ठा मेवाड़ की वीर-भूमि में अवश्य होगी।

ब्राह्मण— (प्रगल्भ होकर) भगवान् आपकी याणी मुफ्त करे।
[आंग मीपकर भगवान् की आर्पणा करता है]

[पदां वदयता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—दिल्ली का लाल किला : रंगमहल का भीतरी भाग :
उदयपुरी बेगम का शयनकक्ष : बादशाह औरंगजेब और
उदयपुरी बेगम बातें कर रहे हैं । समय—रात्रि]

उदयपुरी बेगम—(शराब का प्याना भरकर) लीजिए जहाँपनाह,
यह प्याला अपनी उस चेहृती के नाम पर, जिसने
हुजूर की तस्वीर को जूतियों से कुचल डाला (प्याला
बढ़ाती है) ।

बादशाह—(गुस्से में भरकर) शराब रहने दो, यह कहो कि यह
खबर तुम्हें किसने दी ?

बेगम—(नखरें से) हुजूर, उड़ती बिड़िया खबर दे गई । फिर
इसमें मलाल ही क्या—हमीनों के चोचले जो ठहरे ।
अगर हुजूर को उम नाजनी के नाम का यह प्याला
पीने में दरेग है तो बन्दी ही पीती है । (प्याला पीकर)
याह, क्या लजीज शराब है । ये फिरंगी शराब
घनाने में लाजबाब है । तो जहाँपनाह.....

बादशाह—मैं तुमसे सही तौर पर यह जानना चाहता हूँ कि
तुम्हें यह खबर किसने दी ?

बेगम—बिमी ने दी, मगर है मच । (दूसरा प्याना भरती है)

बादशाह—बेगम, तुम जानती हो कि मैं तुम्हें किस कदर प्यार
करता हूँ । यहाँ तक कि जिन शराब के पीने

की सलतनत भर में मनाही है, तुम्हारे महल में नहीं।

वेगम— (शराब भरती हुई) जानती हूँ, जहाँपनाह ! मगर लोंडी का इतना श्याल उस रूपनगर की रानी के बाद रहेगा या नहीं यह कौन जाने ? (हँसकर) जाने दीजिए, जो होगा देखा जायगा। लीजिए, एक जाम पीकर गम गलत कीजिए।

बादशाह— मुझे माफ़ करो वेगम ! मैं संजीदी से जानना चाहता हूँ कि क्या यह ग़बर सच है ?

वेगम— एकदम सच।

बादशाह— तुम यह कहना चाहती हो कि तुम्हें यह ग़बर तुम्हारे भातबर आदमी ने दी है ?

वेगम— बेग़फ़ ! (प्याना पीकर) हुज़ूर का इरादा क्या है ?

बादशाह— मैं रूपनगर की ईंट से ईंट बजा दूँगा।

वेगम— बादशाह आलमगीर के लिए यह एक भदना काम है। मगर इसी निस्तमिले में क्या हुज़ूर मेरी एक स्वाहिश पूरी करेंगे।

बादशाह— कौनगी स्वाहिश वेगम।

वेगम— एक छोटी-सी स्वाहिश।

बादशाह— प्राणिर मुतूँ भाँ।

वेगम— महज़ मजाक।

बादशाह— तुम क्या चाहती हो वेगम ?

वेगम— हुजूर, ये वदशक्ल गेंड़े की सी शबलवाली बाँदियाँ मेरा तम्बाकू ठीक तौर पर नहीं भर पाती हैं। सुना है राजपूताने की बाँदियाँ तम्बाकू भरना खूब जानती हैं। क्या मजा हो जो यह रूपनगर की बाँदी मेरा तम्बाकू भरे। जहाँपनाह, यह अदना-सी मेरी फर्माइश है।

बादशाह— (उठते हुए) तुम्हारी यह अदना फर्माइश पूरी की जायगी। रूपनगर की वह बाँदी तुम्हारा तम्बाकू भरेगी।

वेगम— (घुमा होकर प्याला भरती हुई) शुकिया जहाँपनाह ! तों इसी खुशी में हुजूर एक प्याला इस विलायती दाराब का न पीजिएगा ?

बादशाह— नहीं वेगम, अभी मुझे बहुत काम है।

[जाता है]

छठा दृश्य

[स्वान— रूपनगर के राजा का दीवानघाना : राजा और मन्त्री बातें कर रहे हैं। मगम—धाराब।]

मन्त्री— महाराज ! आज ही दिल्ली को जयाव देने का शान्तिरी दिन है। आज शाही कासिद को बिदा करना होगा।

राजा— मैं इतना अघम नहीं। जीते जी अपनी कन्या विधर्मी को नहीं दूँगा। मेरे तन में दानिय रक्त है। मेरे पूर्वजों ने अपनी आन पर प्राण दिए हैं। बादशाह को लिख दो। हमें उनका प्रस्ताव स्वीकृत नहीं है।

दीवान— महाराज ! कल्पना कीजिए कि अभी तो बादशाह ने विनय शिष्टाचार से राजपुत्री की याचना की है, यदि वह जोर-जुल्म पर उताह होकर बल से कुमारी का डोला से जाय तो कौन हमारी रक्षा करेगा ? राजपूताने के सभी राजपूतों की बेटियाँ शाही रङ्ग-महल की शोभा विस्तार कर रही हैं ! एक-दो जो बच रहे हैं उनकी गिनती उँगली पर गिनने योग्य है। वे तभी तक बच सकते हैं जब तक शाही क्रूर दृष्टि उनकी ओर न हो। फिर जो लोग शाही रिश्तेदार हो चुके—वे अपने मुँह की कालिय पाँछने को चाहते हैं कि दूम्रे राजपूत क्यों धड़ते बचे रहें। फिर राजपूतों में संगठन नहीं, एकता नहीं। स्वार्थ और धमण्ड ने राजपूतों की वीरता और तलवार की धार को उन्हीं के लिए शाप बना दिया है। हमें महाराज, दम विषय पर जंग ठीक समझें विचार कर लें।

राजा— विचार हो चुका—मैं शाही महल में नदनी नहीं दूँगा।

दीवान— तो महाराज, इस छोटे से राज्य की कुशल नहीं।
हमें अपना सब कुछ खोना पड़ेगा।

राजा— मैं खुशी से सर्वस्व दूँगा। पर अपने राजपूती जीवन
पर दाग न लगाऊँगा।

दीवान— अभयदान मिले तो और एक बात निवेदन करूँ।

राजा— निर्भय होकर जो चाहे कहिए। आप राज्य के पुराने
शुभचिन्तक और हमारे मित्र हैं। आप कभी कच्ची
बात न कहेंगे।

दीवान— महाराज, आत्मरक्षा का और उपाय है।

राजा— वह क्या ?

दीवान— राणा राजसिंह की राजकुमारी ब्याह दीजिए।
राणा राजसिंह इस समय राजपूताने का दैदीप्यमान
नक्षत्र है। वह परम राजनीतिज्ञ, चतुर, कर्म, धीर
और प्रतापी है। राजपूताने का यही केन्द्र है। उसकी
मित्रता और सम्बन्ध भविष्य में हमारे लिए परम
सुखद होगा।

राजा— यह अगम्भव है। दीवानजी, जिस दानु ने मेरे राज्य
पर आक्रमण करके मेरा गढ़ छीन लिया है, उसे तो
मे डमी तलवार का तीखा पानी पिलाने का इच्छुक
है। उसे मैं बेटी दूँगा ?

दीवान— महाराज, बड़े म्वालों की रक्षा के विचार से छोटे-
मोटे म्वालों त्यागने पड़ते हैं। यह अवसर क्रोध

करने का नहीं है। राजनीति कहती है कि यदि हम राणा का यह अपराध क्षमा कर उसके पास राजकुमारी के सम्बन्ध का सन्देश भेजेंगे, तो सब और कल्याण ही कल्याण है। पहिली बात तो यह होगी कि राजकुमारी को सर्वश्रेष्ठ घर-वर मिलेगा और उसकी चिन्ता के भार से हम मुक्त होंगे। दूसरे राजसिंह जैसे शत्रु से मित्रता होगी। तीसरे राजपूतों के संगठन को एक जड़ जमेगी। आगे महाराज की जैसी मर्जी।

राजा— मैं राजसिंह को क्षमा नहीं कर सकता। पहले माण्ड-लगड़ नूँगा, पोछे दूसरी बात।

दीवान— महाराज ! विपत्ति के बादल हमारे छोटे-से राज्य पर मँडरा रहे हैं। इनसे कैसे उद्धार होगा ? सेवक की प्रार्थना है कि फिर से इस विषय पर विचार कर लिया जाय।

राजा— भय और क्रुद्ध विचारने का काम नहीं है। क्षत्रिय का जीवन एक पानी का बुलबुला है। रहा रहा—न रहा न रहा। आप वादनाह को साफ-साफ इन्कार कर दीजिए।

दीवान— महाराज, आज्ञा पाऊँ तो एक निवेदन करूँ ?

राजा— (धपौर होकर) भय और आप क्या कहना चाहते हैं ?

दीवान— (हाथ जोड़कर) महाराज ! राजनीति में काम लेना

चाहिए ? बादशाह से विचारने के लिए दो महीने का अवसर लेना ठीक होगा ।

राजा— पर मुझे तो कुछ सोचना-विचारना नहीं है ।

दीवान— फिर भी महाराज ! दास की प्रार्थना है । दो मास में हम कुछ युक्ति सोच लेंगे, जिससे आगे की वचत निकलने का कुछ सुभीता निकल आएगा ।

राजा— अच्छा, ऐसा ही कोजिए !

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर का राजमहल : महाराणा और कुंवर जयसिंह तथा भीमसिंह : समय—रात्रि]

राणा— कौन हैं वे ?

कुंवर जयसिंह—गोवर्धन के गुन्गार्ई हैं । उनके साथ श्री द्वारिकाधीश और श्रीनाथजी की मूर्ति है । महाराज ! वे सब ओर से निराश होकर आपकी शरण आए हैं ।

राणा— पापी बादशाह ने क्या देवमन्दिरों को भी विध्वंस करा डाला है ?

भीमसिंह— जो हाँ, उनके सैनिक राज्य भर के मन्दिरों को ढहा रहे हैं । काशी विश्वनाथ के मन्दिर को ढहाकर

उसने मस्जिद धनवा ली है।

राणा— तो भारतवर्ष के हिन्दू इतने पतित हो गए हैं कि चुपचाप महन करते हैं। क्या उनकी रगों में रक्त नहीं है ?

कुँवर जयसिंह—यही नहीं ! उसने जजिया भी लेना शुरू कर दिया है।

राणा— यह तो अत्यन्त अपमानजनक है। हिन्दुओं ने इसका भी विरोध नहीं किया ?

कुँवर जयसिंह—किया था, इस अन्याय के विपरीत अर्ज गुजारे दिल्ली के हिन्दू जामा मस्जिद के आगे जमा हुए थे, बादशाह ने उन्हें हाथी से कुचलवा दिया।

राणा— (उत्तंजित होकर) हाथी से कुचलवा दिया ! दिल्ली के दरवार में इतने हिन्दू राजा हैं, किसी ने कुछ नहीं किया ?

भीमसिंह—कुछ नहीं किया महाराज ! किसी ने चूँ तक न की।

राणा— हाय रे भारत के हिन्दुओं के दुर्भाग्य ! गुंसाईं कहीं ? गए थे ?

भीमसिंह—महाराज ! वे चूँदो, कोटा, पुष्कर, किशनगढ़ और जोधपुर गए थे, पर औरंगजेब के भय से किसी ने मूर्ति को आश्रय नहीं दिया। अब गुंसाईं सब और से निराश हो मेवाड़ की तरफ आए हैं।

राणा— मेवाड़ में शरणागत अभय है। उन्हें वहाँ—मेरे

एक लाख राजपूतों के सिर काटने पर श्रीरंगजेव मूर्तियों के हाथ लगा सकेगा । श्रीनाथजी की मूर्ति की प्रतिष्ठा सीहाड़ में श्री श्रु द्वारकाधीश की मूर्ति की प्रतिष्ठा कांकरौली में करा दी जायगी । मूर्ति की पूजा भोग के लिए समुचित गांवों की व्यवस्था कर दी जायगी । तुम दोनों भाई मूर्तियों को आदर-मान से राज्य में ले आओ ।

भीमसिंह—जो आज्ञा ।

[जाता है]

आठवाँ दृश्य

स्थान—रूपनगर का घन्तःपुर : समय—रात्रि : राजकुमारी चाचमती एकान्त में राजसिंह की तस्वीर मोद में लिए बंटी गा रही हैं।

पाहुन पलकों में बस जाना ।
 नेह नीर दृग छलक रहे अथ ।
 गीले नैन परारंगे पद ।
 मूक प्रतीक्षा अथुत पदध्वनि,
 इम जीवन के घोर-घोर तक—
 अविकल कल तक आ जाना ।
 पाहुन पलकों में बस जाना ।
 अमित तुम्हारी स्मृति ही का धन,

सदा रही घाँचल में बाँधे ।
 धपने में खोई-नी बँठी—
 इस मूने मन्दिर में आकर—
 पीछे मत फिर जाना ।
 पाहुन पलकों में बस जाना ।

[तस्वीर को एकटक निहारती है]

चारमती— प्रभात के सूर्य की किरणों की भाँति तुमने मेरे हृग की अधिरी कन्दरा में प्रवेश किया और उज्ज्वल आलोक बिछेरा । आशा का एक तार मुझे तुम तक सींचे लिए जा रहा है । (देगकर) तुम्हारी स्मृति कितनी मधुर, तुम्हारा चिन्तन कौसी तपस्या, तुम्हारा गुणगान कैसा आल्हादकारक है । हे वीर, हे पौरुष के अवतार, यह क्षत्रिय बाला आज धपने नारी जीवन को तुम्हारे धर्पण करती है । (तस्वीर पर भाषा टेंकती है । अस्मार् निर्मल आती है) ।

निर्मल— अरे ! यहाँ यह क्या हो रहा है ?

चारमती—(तस्वीर दिखाकर) कहीं ? कुछ भी तो नहीं ।

निर्मल— यह धोरी और सीनाधोरी । अच्छा, कुछ भी नहीं सही ।

[मुँह पुनः बन्द देती है]

चारमती—रूठ जाती क्या ? अच्छा मुन, मैं...जरा कुछ सोच रही थी ।

निर्मल— क्या सोच रही थीं राजकुमारी ?

चारुमती—यही कि (सिटपटाकर) कि...क्या बताऊँ ।

निर्मल— नहीं बता सकोगी । बहाना बन सका ही नहीं ।

चारुमती—तू क्या समझती है—बता ?

निर्मल— यही कि कुमारीजी कुछ सोच रही थी ।

चारुमती—क्या सोच रही थी ?

निर्मल— मैं क्या जानूँ, आपके मन की बात ।

चारुमती—तू सब जानती है, बता ?

निर्मल— वह तस्वीर दीजिए, बताऊँ ।

चारुमती—(पत्रकर) कौनसी तस्वीर ?

निर्मल— वही, जो अभी आपने छिपा दी है और जिसे पलकों में बसा रही थी ।

चारुमती—(छट होकर) बड़ी दुष्ट है तू, दूर हो ।

निर्मल— जानो है, महारानी से सब हकीकत कहे देती हूँ ।

[जाना चाहती है]

चारुमती—उहर, मुन एक बात ।

निर्मल— जाने दीजिए—मैं जरा महारानी.....

चारुमती—(हँसकर) मार लाएंगी क्या ?

निर्मल— जी हाँ और ता हो क्या सकती है ।

चारुमती—प्रच्छा मुन !

निर्मल— कहिए ।

चारुमती—(उदाग होकर) कैसे कहूँ ?

निर्मल— मैं समझ गई। पर चिन्ता क्या है ?

चारुमती— (घाँसों में घाँसू भरकर) तूने सब बातें नहीं सुनी।

निर्मल— कौन बातें ?

चारुमती— दिल्ली से दून आया था।

निर्मल— देग चुकी है, सुन भी चुकी है।

चारुमती— अब क्या होगा ?

निर्मल— महाराज ने बादशाह से दो महाने की मुहलत माँगी है।

चारुमती— इसके बाद ?

निर्मल— इन्कार कर दिया जायगा।

चारुमती— इन्कार करने में क्या होगा, पलक-माग्ते दल-ब्रादल
छा जाएँगे—रूपनगर की ईंट-से-ईंट बज जाएगी।

निर्मल— तो उपाय क्या है ?

चारुमती— उपाय है।

निर्मल— (हँसकर) समझी। पर आपकी एक बात मालूम है ?

चारुमती— कौनसी बात ?

निर्मल— राणा से महाराज की शत्रुता है।

चारुमती— किस बात पर ?

निर्मल— महाराणा ने माण्डस्तगढ़ पर धडाई करके उगे दरतल
कर लिया है। महाराज उन पर मेना भेजने की
तैयारी में हैं।

चारुमती— पिनाजो, क्या उनगे नष्ट मकेंगे ?

निर्मल— न सट्ट मकें, वे भी यीर हैं। हारना भी तो वे न

सहन करेंगे । फिर भाण्डलगढ़ उन्हें वादशाह ने दिया था—वादशाह उनकी मदद करेगा ।

चारुमती— वादशाह ज्योंही जानेगा कि उसे डोला देने से इंकार कर दिया गया है, वह रूपनगर की ईंट-से-ईंट बजा देगा ।

निर्मल— जब जो होगा, देखा जाएगा । हम खी जाति कर भी क्या सकती हैं ।

चारुमती— (आंग्र भरकर) राजपूतों की घेटियाँ इसी से तो पैदा होते ही मार डाली जाती हैं । जो बचती हैं, वे ऐसी सांसत भुगतती हैं ।

निर्मल— कुमारीजी, व्यर्थ अपने मन को दुखी न करो, समय पर कुछ न कुछ होकर ही रहेगा । महाराज कुछ करेंगे ।

चारुमती— मुझे धैर्य नहीं होता ।

निर्मल— भगवान् सबके स्वामी, सबके रक्षक हैं । बल्लिए, सोइए ! अधिक जागने से आपकी तथियत बिगड़ जाएगी ।

[दोनों जाती हैं]

[पक्षी गिरता है]

नवाँ दृश्य

[स्थान—उदकपुर का राजमहल : पाटवीकुमार जयगिर का महल : जयगिर की रानी—बमनकुमारी घाने बस में मगियों महित का रथी है । समय—प्रातःकाल]

मत देर करो सजनी अब भटपट नूतन साज सजाओ ।
मेरे सूने मनमन्दिर में नूपुर मखी बजाओ ।
नव वसन्त आया आली—फूलों से मुझे रिभाओ ।
जीवन-तरंग की भूना में तुम भूलों, मुझे भुलाओ ।
गाकर मधु गायन कोकिल स्वर में मु-वसत बुलाओ ।
प्यासे प्राणों को सति छक्कर जीवनमुधा पिलाओ ।
उर की क्षीपशिरा से जगमग घनगिन दीप जलाओ ।

रानी— तारों से भरी इस रात में जीवन कैसा स्निग्ध मालूम होता है । प्राणों में मोहक स्नेह जैसे फूटा पड़ना हो । सगिमो ! यह जीवन इतना सुन्दर क्यों है ?

एक गगी—इसलिए कि यह जीवन मगार का केन्द्र है ।

रानी— मन् है, जैसे प्रकृति में प्रभान, मध्याह्न, अपराह्न और गन्ध्या होनी है, उगी प्रगर जीवन में भी । कहाँ तो, जीवन में कौनगा क्षण मयमे सुन्दर होता है ।

एक गगी—प्रभात, जहाँ चाकांक्षाओं की कोमल कविकाएँ प्रविकसित रहती हैं । प्रातःकालीन मन्द गमोर की भाँति जहाँ मरन-शुद्ध प्रेम की भीनी महक हृदय को विरलित बन्नी रहती है । जहाँ चिन्ता की धूल-गदं नगी, अधिराग-मद की दुपहरी गही, जहाँ केवल उन्मुक्त विनयियों की-गी उड़ान है, जहाँ उपा की

सुनहरी किरणों की भाँति मनोरम अलहड़पन है ।
जीवन का वह प्रभास कैसा सुन्दर—कैसा प्रिय—कैसा
पवित्र है सच्ची !

दूसरी— मचमुच ! परन्तु यौवन जीवन की दुपहरी है ।
उममें जब वासना की प्रचण्डता घातो है—तो फिर
ससार का कुद्ध और ही रूप दीखने लगता है ।
उसका एक भलग ही सौन्दर्य है, जहाँ तेज है, तप
है, उत्कर्ष है और शक्ति का समुद्र है ।

रानी— परन्तु उस प्रखर सौन्दर्य में भी एक भीषण वस्तु
तो दुर्दम्य वासना का ज्वार है । उसे यदि सीमित
रखा जाय तो यौवन जीवन का सर्वोत्कृष्ट भाग है ।
नहीं तो पतन का सरल मार्ग ।

दूसरी गयी—देवी मध्याह्न के बाद प्रखर तेजयान् सूर्य का
पतन तो होना ही है ।

रानी— उते पतन क्यों कहती हो गयी ! विकास की एक
मोमा है । तुम क्या कहना चाहती हो कि जीवन
में प्रगटना बटनी जाय । फिर तुम्हें मालूम है—
पृथ्वी गोल है, सूर्य के चारों घोर घरती घूमती है ।
अधिरस गति में प्रवृत्ति का यह क्रम चल रहा है ।
सगी, जिसे हम प्रमान-मध्याह्न-गायंकाल और
रात्रि कहते हैं, वह मत्प कुद्ध नहीं, परिस्थितियों का
परिचरन है । प्रवृत्ति तो एक-एक-एक-माय से अग्रनिहत-

गति में अपने मार्ग पर चल रही है।

नीमरी— तो फिर जीवन भी ऐसा ही रहा ?

गनी— तब क्या ? जीवन का जो केन्द्र बिन्दु है, वह तो न कभी वालक होता है, न वृद्ध, न उसमें वासना उद्दीप्त होनी है, न शमन। यह सब तो भौतिक परिवर्तन हैं। उन्नी प्रकार, जैसे मूर्यं न कभी घस्त होता है न उदय। वह तो ध्रुव रूप से अपने स्थान पर स्थिर होकर नेत्र विभेगता है। विकल्प के नेत्र ही उगफा उदय-घस्त देय पाते हैं।

दूमरी सखी— तब तेजस्वी पुण्यो का भी यही हाल है। बाह्य दृष्टि से जो उनका उत्थान-पतन दीप्त पड़ता है, वह सब विकल्प है ? वे हर क्षण में वैसे ही तेज और शक्ति के अधिष्ठाना रहते हैं।

रानी— निश्चय ही ! (हंसकर) अग्न्यु गगियो ! हम लोग तो भ्रान्त-विनाश-हास करनी-करतीं तात्त्विक धियेचना में लग गईं। (देगकर) तो, महाराज प्रा रहे हैं।

[कुमार जयगिह आते हैं। सब गगियां अदृश में दृष्ट जाती हैं।]

रानी— (हंसकर) आज आपके आगेट का दिन है न ?

जयगिह— है तो।

रानी— वहाँ, तैयारी तो कुछ नहीं दीप्त पड़ती।

जयगिह— (हंसकर) मोचना है, तुम्हारे दम प्रेमप्रवाद को छोड़

कर कहाँ जाऊँ । जाने दो, आज मेरा नहीं, तुम्हारे
आसेट का दिन रहे ।

रानी— वह कैसे स्वामिन् !

जयसिंह— (हँसकर) बिल्कुल सीधी बात है प्रिये ! मैं तो तुम्हारा
सर्वसुलभ आसेट हूँ ।

रानी— सच ? पति क्या स्त्रियों के सुलभ आसेट हुआ करते
हैं, खासकर क्षत्रिय पति ?

जयसिंह— मैं तो यहाँ समझता हूँ । पुरुषों का शिकार स्त्रियाँ
अनायास ही कर डालती हैं । स्त्रियों के नयन वाणों
से.....

रानी— छी: स्वामी ! वीर राजपूत भी यदि कामिनी के
नयनवाण के आसेट हुए तो फिर वे देश पर, धर्म
पर, जाति पर जीवन की उरसगं कैसे कर सकेंगे ?

जयसिंह— उत्सर्ग ? जीवन की इस मध्यावस्था में ? तुम्हीं तो
कहा करती हो कि जीवन कैसा सुन्दर है, कैसा
मनोरम है, कैसा बहुमूल्य है ।

रानी— सभी तो जीवन उत्सर्ग का माहात्म्य है । सड़ी-गली
चीजें तो लोग यों ही फेंक देते हैं, प्रियतम चीज को
उत्सर्ग करना स्वयं बड़ा त्याग है ।

जयसिंह— प्रियतम चीज को उत्सर्ग करना ?

रानी— क्यों नहीं, फूल गिलसता है, जब वह धीरे २ खिरमिन
होना है, कैसा मोन्दयं समझना है ? जब वह पूर्णरूप

से विकसित हो जाता है, उसमें सौरभ का समुद्र प्रवाहित होता है। वही उसके उत्सर्ग का समय है। उभी समय उसे भट्टी में डालकर इत्र खींच लेना चाहिए। नहीं तो.....

जयमिह— नहीं तो ?

रानी— (कफ़ल स्वर में) वह भुर्भाकर सूख जायगा, उसकी पंखड़ियाँ भड़ जाएँगी और उसका जीवन व्यर्थ होगा। अस्तित्व नष्ट होगा।

जयमिह— मनुष्य का जीवन भी ऐसा ही है कुछ, तुम यह कहाना चाहती हो ?

रानी— हाँ स्वामी, और राजपूतों का सबसे अधिक।

जयमिह— क्यों ?

रानी— त्याग श्रेष्ठ है, यह सब कहते हैं। पर प्राण-त्याग मयमे श्रेष्ठ है और वह क्षत्रिय युद्ध में त्यागते हैं।

जयमिह— यह द्रुमा क्षत्रिय पुरुष का धर्म, अब क्षत्रियवाना की धान भी बहो।

रानी— यह उत विकसित फूल को सुगन्ध है, फूल के जीवन के माथ उनके बाद भी सौरभ विगंगना उगका काम है। फूल जब मन्ने में तनाया जाता है, तब भी वह पशुना रहती है वह धमर है—अशय है। वह प्राणों से मीधा सुगन्ध उगने वाली गन्ध है। फूल

के प्राणों का निचोड़ उसी में है, स्वामी !

जयसिंह— (निकट आकर) यह तुम्हारे भीतर कौन बोल रहा है प्रिये ! क्या तुम मेरी वही मुग्धा-सरला वाला कमल हो ? नहीं-नहीं, कोई देव-अंश तुम में है ।

रानी— (हँगर) है स्वामी, वह अश राजपूतशक्ति का है । जो इस आपकी दासी के स्त्रीत्व से प्रयत्न उस पर शासन कर रहा है । यह नारी शरीर आपका दास है, पर वह राजपूतशक्ति नहीं ।

जयसिंह— वह क्या है ?

रानी— वह तुम्हारी इस तलवार की धार से भी प्रखर है । घातक भी और रक्षक भी ।

जयसिंह— जाने दो इसे, मुझे तुम्हारा स्त्रीत्व चाहिए । माधुर्य मौकुमार्य, कोमलता और भावुकता से ओतप्रोत ।

रानी— नहीं स्वामी, उमसे अधिक तुम्हें इस अथम नारी शरीर में बनी हुई राजपूतशक्ति की जरूरत है ।

जयसिंह— (हँगर) क्या घातक होने के कारण ।

रानी— (हँगर) नहीं ग्यारु होने के कारण । स्वामी, आप महा तेजस्वी गंगा राजसिंह के पाटवी पुत्र-मेवाड़ की यशस्विनी गद्दी के उत्तराधिकारी हैं ।

जयसिंह— जानता है । और यह भी कि शक्ति और प्रेम को देवी यमनकुमारी का यन्त्र भी । चलो अब !

रानी— (हँगर) चलो ! [दोनों जाते हैं]

[पर्दा गिरता है]

तीसरा अङ्क

पहिना दृश्य

[स्थान—उदयपुर : देवी के मन्दिर के पार्श्व भाग में रत्नगिह और
उमकी भावी पत्नी राजकुमारी मुजागमुन्दरी : समय—प्रातःकाल]

रत्नगिह— दहरो राजकुमारी, मुझे तुमसे कुछ कहना है। क्या
तुम जानती हो कि मैंने तुम्हें पूजा के वहाने यहाँ
मिलने का बुलाया है।

राजकुमारी—जानती हूँ। परन्तु यह क्या उचित हुआ है? माता
जी ने मुझे भूट घोषणा पड़ा है।

रत्नगिह— इसमें अनुचित क्या है? तुमने मेरी मंगनी हुई है।
तुम मेरी भावी पत्नी हो, मुझे तुमने मिलने का
अधिवार है।

राजकुमारी—कहिए, आपने मुझे क्यों बुलाया है?

रत्नगिह— मुझे कुछ कहना है।

राजकुमारी—कहिए।

रत्नगिह— जानती जन्दी? यह भी अगम्य है, मुझे गोपना
पड़ेगा।

राजकुमारी—तो फिर कभी कह लीजिएगा, अभी मैं जाती हूँ ।

[जाना चाहती है]

रत्नसिंह— (रसना रोककर) बिना जवाब दिए न जा पाओगी
कुमारी !

राजकुमारी—आप कुछ कहते भी हैं ।

रत्नसिंह— कहता हूँ, सुनो ।

राजकुमारी—कहिए ।

रत्नसिंह— पिनाजी महाराणा से रष्ट्र होकर दिल्ली चले गए हैं ।

राजकुमारी—मुन चुकी हूँ ।

रत्नसिंह— वे जीते जी मेवाड़ आएंगे भी या नहीं, सन्देह है ।

राजकुमारी—यह हमारा बड़ा दुर्भाग्य है । भ्रम में जाऊँ ?

[जाना चाहती है]

रत्नसिंह— क्या बिना सुने हो ? वह बात . . .

राजकुमारी—कौन बात ? जम्द कहिए ।

रत्नसिंह— कह तो रहा हूँ, पर भागोगी तो कैसे कहूँगा ?

राजकुमारी—ससियाँ मन्दिर में बाट देग रही हैं ।

रत्नसिंह— वे पूजा कर रही हैं । घण्टा-घारती की आवाज नहीं
सुनती ?

राजकुमारी—भ्रम जाऊँ मैं ।

रत्नसिंह— (दृढ़ता से) जो तुम्हें मुझ से इनना विराग है
तो जाओ, फिर मन मुनो-में भी देग छोड़ दूँगा ।

[जाना चाहता है]

राजकुमारी—(प्रवीर होकर) मुनिए ! आप क्या कहना चाहते हैं । कहिए न ?

रत्नसिंह—मैं भी पिताजी को भौंनि मेवाड़ त्याग दूँगा ।

राजकुमारी—किसलिए ?

रत्नसिंह—क्या करूँ, जब कोई मेरी बात ही नहीं सुनता ।

राजकुमारी—मुनती तो हैं, कहिए !

रत्नसिंह—हाँ तो.....सोचता हूँ, कहूँ कि न कहूँ । जाने दो, नहीं कहता ।

राजकुमारी—कहिए-कहिए !

रत्नसिंह—फिर कभी मुन लेना—प्रभी तुम्हें देर हो रही है ।

राजकुमारी—आप कहिए !

रत्नसिंह—सखियाँ बाट देना रहो होंगी ।

राजकुमारी—हाथ जोड़ती हूँ—कहिए !

रत्नसिंह—(हँसकर) माताजी नाराज होंगी ।

राजकुमारी—(सुभनाकर) कही वृद्ध न होगा । आप कहिए तो !

रत्नसिंह—तब मुनो—मन लगाकर, ध्यान से ।

राजकुमारी—मुन तो रही हैं ।

रत्नसिंह—हाँ, पिताजी तो दिल्ली चले गए । इसके बाद.....

राजकुमारी—इसके बाद क्या ?

रत्नसिंह—बड़ी गम्भीर समस्या है—बड़ी टेढ़ी बात है ।

राजकुमारी—ऐसी क्या बात है ?

रत्नसिंह—अच्छा कहता हूँ—सूनो !

राजकुमारी—(हँसकर फिर लजाकर) भ्रव और कैसे सुनूँ ?

रत्नसिंह—(निकट आकर) हमारा विवाह शीघ्र हो जाना चाहिए ।

राजकुमारी—(लाज से सिकुड़कर) छो, यह भी कोई सुनने की बात है । (जाना चाहती है)

रत्नसिंह—(रास्ता रोक कर) कैसे नहीं है । क्या तुम यह बात सुनना नहीं चाहती ?

राजकुमारी—मैं क्या जानूँ । भ्रव में जाती हूँ । (जाना चाहती है)

रत्नसिंह—(रास्ता रोक कर) जा न सकोगी । जवाब दो ।

राजकुमारी—पिताजी से कहिए । परन्तु

रत्नसिंह—परन्तु क्या ?

राजकुमारी—बिना महाराज के आए

रत्नसिंह—विवाह कैसे होगा, यही न ?

राजकुमारी—हाँ, पिताजी ने प्रतिज्ञा की थी कि.....

रत्नसिंह—कि वे अपनी पुत्री को मेरे पिताजी के हाथ सौंपेंगे । और उन्होंने प्रसन्नता से तुम्हें पुत्रवधू बनाना स्वीकार कर लिया था । भ्रव वे क्या बिना पिताजी की उपस्थिति के व्याह न करेंगे ?

राजकुमारी—मैं नहीं जानती, आप पिताजी से पूछिए । परन्तु क्या ऐसे समय में जब देश पर शत्रुओं की चढ़ाई का भय है, आपका विवाह की बातें करना उचित है ?

रत्नसिंह—तुमसे किसने कहा कि शत्रु की चढ़ाई का भय है ।
 राजकुमारी—सुनती हूँ । महाराणा के उद्योगों को दिल्ली का
 बादशाह सन्देह और भय की दृष्टि से देखता है और
 वह चाहे जब मेवाड़ पर आ धमकेगा ।

रत्नसिंह—इसकी क्या चिन्ता है, वह जब भी मेवाड़ में आएगा
 यह तलवार उमका स्वागत करेगी (तलवार निकाल
 कर हवा में घुमाना है) ।

राजकुमारी—एक अजं बरू ?

रत्नसिंह—कहो कुमारी !

राजकुमारी—नाराज न होना ।

रत्नसिंह—कभी नहीं ।

राजकुमारी—आप वीरपुत्र हैं । आपके पूज्य पिता महाराज ने
 बड़े-बड़े कारनामे किए हैं ।

रत्नसिंह—और हमारे पूर्वजों की भर्षादा भी मेवाड़ में सर्वो-
 परि है । हम त्यागी बूँडाजी के बंशधर हैं, कुमारी !

राजकुमारी—आपके चरणों की दामो होना मेरा परम सौभाग्य
 है परन्तु

रत्नसिंह—परन्तु क्या ?

राजकुमारी—मैं भी हाड़ी हूँ, कुमार ! हाड़ाओं का वंश भी
 हैठा नहीं ।

रत्नसिंह—हाड़ाओं के अमर कारनामे जगद्विरघात हैं ।

राजकुमारी—मेरा एक प्रतिज्ञा है ।

रत्नसिंह— वह क्या ?

राजकुमारी—प्राण कीजिए कि आप पूरा करेंगे ।

रत्नसिंह— तुम मेरी भावी पत्नी हो कुमारी, तुम्हारी प्रतिज्ञा प्राण रहते अवश्य पूरी करूँगा ।

राजकुमारी—सुनकर परम सुख हुआ कुमार ! मेरी प्रतिज्ञा है, मैं वीर पुरुष की पत्नी बनूँगी ।

रत्नसिंह— तो क्या तुम्हें मेरी वीरता में सन्देह है ?

राजकुमारी—नहीं, पर मैं भाँपों से देखना चाहती हूँ ।

रत्नसिंह— भाँपों से देखोगी, हाड़ी राजकुमारी !

राजकुमारी—क्या रष्ट हो गए राजकुमार, मूर्ख बालिका का अपराध क्षमा कीजिए ।

रत्नसिंह— (हांड काटकर) अच्छी बात है कुमारी, वीरता का प्रमाण देकर ही मैं तुमसे व्याह करूँगा ।

[तेजी से जाता है]

[पर्दा बदलता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—दिन्नी का शारी महल : बादशाह खानमगोर और उनकी बेटी जेजुनिशा : ममय—गन्ध्यावान : महल का गुना हुआ मुसज्जिन नगर बाग]

बादशाह— तो हूँ नगर का राजा मर गया ?

जेबुन्निसा—जी हाँ, जहाँपनाह ! उसके भतीजे रामसिंह ने धर्जो भेजी है कि वही रूपनगर की गद्दी का सही धारिण है। वह तख्ते मुगलिया का बफादार और पुराना शाही ग्यादिम है। उसे शाही फर्मान के जगिा रूप-नगर का राजा तस्लीम करके भरफराज किया जाय।

यादनाह— मगर उमने उम धम्र का क्या जवाब दिया है ?

जेबुन्निसा—हुज़ूर, उसने कहलाकर भेजा है। उमकी नाचीज बहिन को अगर यादनाह बेगम बनने की मुग-किस्मती बरसी जायगी तो यह उमके लिए फख्र की धान होगी। यह शाही रिस्नेदारी को धपने लिए इज्जत की चीज ममभता है।

यादनाह— बहतर, कल उसके पास शाही सनद भेज दी जाएगी और वह रूपनगर का राजा तस्लीम कर लिया जाएगा। बदनीर और माण्डल के परगने भी उसे दे दिए जाएंगे। मगर धतं यह है कि वह फौरन ही अपनी बहिन को दिल्ली खाना कर दे।

जेबुन्निसा—हुज़ूर उसकी एक धतं है।

यादनाह— यह क्या ?

जेबुन्निसा— यह चाहना है, हजरत मत्तामत मुद रूपनगर तग-रोफ से जाकर बाकायदा राजा की बेंटी से शादी करके उमकी इज्जत धफजाई करे।

यादनाह— उसकी इय धतं की क्या बजह है ?

जेदुन्निसा—हुज़ूर, वह चाहता है कि शाही रिस्तेदार होने से उसका ख़तवा बढ़े, फिर हुज़ूर उसकी यह भर्जी कबूल फर्माएँगे तो एक ढेले से दो शिकार होंगे।

बादशाह—तुमने इस मामले में क्या मसलहत सोची है।

जेदुन्निसा—जहाँपनाह को मालूम है कि मेवाड़ के राना की ज्यादातियाँ बढ़ती जाती हैं। उमने न सिर्फ़ शाही इलाके जवरन कब्जे में कर लिए हैं। बल्कि बागी जोधपुर की रानो को अपने यहाँ पनाह दी है और राठीरों से मिलकर वह तमाम राजपूताने में एक जबरदस्त ताकत—तस्ते मुगलिया के खिलाफ खड़ी कर रहा है। सो हुज़ूर इस बार अगर हपनगर जाएँगे तो राजा की रवाहिश भी पूरी होगी, राना को भी देण लिया जाएगा और हजरत मुइनुद्दीन की दरगाह शरीफ की जियारत भी हो जाएगी।

बादशाह—तुम्हारे खयालात काबिले गौर हैं। (बुछ गोणकर) बहतुर, मैं उम राजा की भर्जी मंज़ूर करता हूँ। मैं आज ही फौजदार दिनेरमाँ और हसनभत्तोराँ को ५० हजार फौज की तैयारी का हुक्म देना हूँ मगर...

जेदुन्निसा—धब जहाँपनाह किम धस पर गौर करने लगे ?

बादशाह—यही, कि क्या वह राजा की बेटो बादशाह की बेगम बनना पसन्द करेगी। तुमने कहा था न कि, उसने मेरी तस्वीर पर सात मारो थी।

जेवुन्निसा— जी हाँ हुआ, वह बहुत ही मगरू भो है ।

बादशाह— और साथ ही आलमगीर को दिल से नफरत करने वाली भी ।

जेवुन्निसा— उसकी यह मजाल ? एक मामूली काफिर जमींदार की बेटी की यह हिमाकत ? उसे पहिले गुस्ताखी की सजा दी जायगी ।

बादशाह— (बुढ़ सोचकर) तुम उसके लिए क्या सजा तजवीज करती हो जेवुन्निसा ?

जेवुन्निसा— धन्वा जान ! अगर उस गंवारिन के दिमाग में जरा भी मगरूरी पाई गई तो उसे कुत्तों से नुचवा डालूँगी ।

बादशाह— (मुस्करा कर) और उसके बाद ?

जेवुन्निसा— उसके बाद धन्वा.....

बादशाह— मगर मेरी प्यारी बेटी ! किसी लड़की को बादशाह की बेगम बनाना और कुत्तों से नुचवाना एक ही चीज तो नहीं ।

जेवुन्निसा— जहाँपनाह.....

बादशाह— ठहरो नहजादी, मैं इस मामले पर और करूँगा । सब में जाता हूँ । तुम्हें भी इस शादी में मेरे हमराह चलना होगा ।

जेवुन्निसा— जैसा जहाँपनाह की मर्जी ।

जेयुन्निसा—समझी, उस गह्वर की पुतली गैवारिन के लिए मालूम होता है, अब्बा के दिल में कहीं किसी कोने में मुहब्बत छिपी है। मगर देखा जाएगा। यह थारमिनियन बांदी तो अब नहीं सही जाती ! (कुछ सोचकर) कोई है ?

एक बांदी—(हाथ जोड़कर) हुबम गुदाबन्द !

जेयुन्निसा—शराब ।

बांदी— जो हुबम । [घदव से झुककर जाती है]

जेयुन्निसा—गुदा ने चाहा तो हिन्दुस्तान पर फिर एक नूरजहाँ हुकूमत करेगी । (बांदी शराब लाती है, शराब को प्याली में डालकर पीती हुई) यह नूरजहाँ मैं हूँ । (प्याला फर्श पर फेंकती हुई बांदी से) इधर घा !

बांदी— (हाथ जोड़कर) लीडी को क्या हुबम होता है ?

जेयुन्निसा—तुझे हमारी खूबसूरती पसन्द है ?

बांदी— बरूलाह सरकार, शाही हरम में लामिसात हैं ।

जेयुन्निसा—(हँसती हुई) सच ?

बांदी— बगुदा ।

जेयुन्निसा—हजरत नूरजहाँ से भी ज्यादा ।

बांदी— (जमीन घूमकर) हुजूर जमों का चाँद हैं ।

जेयुन्निसा—(शराब भरकर एक ही घूंट में पीकर बांदी पर प्याला फेंककर) भाग यहाँ से हरामजादी ।

[बांदी घादाव बजानी भाग जाती है]

जेबुन्निसा—(बुद्ध घाग ही घाग) जमीन का चाँद तो है ही, जैसे चाँद में धब्बे होते हैं, उसी तरह मेरे अन्दर भी धब्बे हैं। मगर इससे क्या ? मैं आलमगीर बादशाह की बेटी, मुगल हरम की रानी और आलमगीर की प्यार की पुनली हूँ। अम्मा, जिन्होंने रहम सीखा ही नहीं, जो भूंगे काठ की तरह महज बादशाह नजर आते हैं, इस जेबुन्निसा को दिल से प्यार करते हैं, मगर उम प्यार में हिम्मा बटाने वाली वही आर-मिनियन बाँदी है जिसे बुर्दा फरोशी से दारा ने गरोद लिया था और अपने नफ़्त का शिकार बनाया था—वही बेगम और बे-अस्मत औरत बद-किस्मत दारा के कल होने पर अपने आका और गाबिद के कानिल आलमगीर की बाँदी बनने को भट तैयार हो गई। तुफ ! और आज वह अपनी गूँथगूरती की बजह से बादशाह की बेगम बनकर धाँही रंगमहल को अपने ही अदल में रखना चाहती है। अम्मा उमके मामने जाने पर जैसे आलमगीर ही नहीं रहते। एक फर्माबदार साबिद बन जाते हैं—वह बाँदी उनके मामने शराब पीती है और अम्मा उनके साथ ऐयानी की दरिया में अपनी तमाम धाननीमत और बादशाहत जैसे द्रव्यो देते हैं। (बुद्ध धृग खबर होट जाती हुई) मगर मैं यह

नहीं बर्दाश्त कर सकती। अर्ध्वा को उस नागिन के घपेट से बचाना होगा और उसके लिए यह एक रास्ता है। वह भोली-भाली गँवार हिन्दू लड़की दिल से बादशाह को नफरत करती रहेगी और अर्ध्वा उससे अपनी बादशाही तबियत की बची-बुची सुहृदवत से उलझते रहेंगे। उधर मैं रंगमहल पर अपना अटल रंग जमाऊँगी। (एक भरपूर राधा का प्यासा पीकर मसनद पर सुढ़क जाती है)।

{ पदां गिरता है }

तीगरा दृश्य

[स्थान—अजमेर का महल : राजारूपसिंह की विधवा रानी और राजा रामसिंह बाने करते हैं]

रानी— क्या तुमने दिल्ली के बादशाह को चाक का डोसा देना मंजूर कर लिया है।

रामसिंह— आपसे किराने कहा रानी माँ !

रानी— मैं पूछती हूँ कि क्या यह सच है ?

रामसिंह— अगर सच हो तो ?

रानी— और यह भी सच है कि दाही सेना राजकुमारी का होना मेने को दिम्नी से चल पड़ी है।

रामसिंह— वादनाह सलामत गुद राजकुमारी से शादी करने चारात सजाकर भा रहे हैं। भला यह इज्जत किसी भीर राजा को भी नसीब हुई थी।

रानी— तुमने मेरी बिना आज्ञा ऐसा क्यों किया ?

रामसिंह— मैं राजा हूँ। राजकाज के मामलों में किस-किस बात की आज्ञा ली जाएगी ?

रानी— बिटिया का व्याह कोई राजकाज है ?

रामसिंह— वादनाह ने मन्वन्ध रखने वाली प्रत्येक बात राजकाज है।

रानी— तुम्हें स्वर्गीय महाराज की इच्छा मालूम है ?

रामसिंह— उनकी बातें उनके साथ गईं।

रानी— उनकी आज्ञा के विरुद्ध कुछ न हो सकेगा।

रामसिंह— भय तो मेरी ही आज्ञा के अनुसार सब काम होंगे। मैं राजा हूँ।

रानी— वह न होने पाएगा।

रामसिंह— बतौ होगा।

रानी— मैं आज्ञा देती हूँ।

रामसिंह— यह मेरा काम है, आपका नहीं। घाट महल में बैठकर पूजा-पाठ, दान-धर्म कीजिए।

रानी— तो तुमने राजकुमारी का दोला वादनाह को देने की सोचती है।

रामसिंह— निश्चय ! यह तो बहत मानूनी बात है। इनके

सिवा बड़े भारी लाभ की भी ।

रानी— मामूली बात है, क्यों ? सुनूँ तो जरा ।

रामसिंह— सुनने की क्या बात है । सभी राजाओं ने अपनी बेटियाँ शाही हरम में दी हैं । रानी माँ, हमारी बहन बादशाह की बेगम बनेगी, यह जानकर तुम्हें गुप्तो होना चाहिए ।

रानी— खुशी होना चाहिए ? क्यों ?

रामसिंह— इसलिए कि बादशाह के रिश्तेदार बनकर हमारा राज्य और पद-भर्यादा बढ़ेगी । दिल्ली के दरबार में हमारा ही सितारा चमकेगा । बादशाह ने वे सब इलाके हमें दे दिये हैं जो उदयपुर के राजा ने हमसे छीन लिए थे । शाही फौज जल्द उन्हें दखल करके हमारे सुपुर्द कर देगी ।

रानी— धिक्कार है तुमको ! तुम यह न कर पायाग रामसिंह !

रामसिंह— (प्रोध में) कोई भी शक्ति रूपनगर के राजा को नहीं रोक सकेगी ।

रानी— तो तुम बसपूर्वक यह कुचर्म करोगे ?

रामसिंह— मैं अपने राजापने के अधिकार काम में लूँगा ।

रानी— कुमारी की मर्जी के विरुद्ध ?

रामसिंह— वह अल्हड़ सड़की घपना गुप्त-गुप्त क्या जाने ?

रानी— मेरी मर्जी के विपरीत ?

राममिह—मेरी सलाह है कि आप इन पचड़ों में न पड़ें। दान-धर्म.....

रानी— स्वर्गीय महाराज की इच्छा ?

रामसिंह— वह भी स्वर्ग मिचागी।

[तंत्रों से चारमती घानी है]

चारमती— तुम यह न कर पाओगे भैया !

रामसिंह— बेसमझ सड़की ! बादशाह की बेगम बनने के बाद.....

चारमती— मैं जान पर सेल जाऊँगी। पर देश और धर्म के दायु को आत्मार्पण न करूँगी।

राममिह— (हँसकर) दिल्ली के रगमहल के बँभव देखकर सब भूल जाओगी, बहन ! मगर याद रखना जिम भाई की बशीलत यह सोभाग्य प्राप्त हुआ है, उसे ऐश्वर्य मद में न भूल जाना।

चारमती— (हँस कर) मैं क्षत्रिय बाला हूँ ?

राममिह— और मैं क्षत्रिय राजा हूँ।

चारमती— तुम क्षत्रियाधम हो।

[तंत्रों से जानो है]

[पदां गिरता है]

चौथा दृश्य

{स्थान—रूपनगर का महल : कुमारी चारुमती और उसकी सखी
नियंत्रण : समय—प्रातःकाल}

निर्मल— अब उपाय ?

चारुमती— उपाय तेरा सिर ।

निर्मल— अच्छी बात है, दिल्ली में भी चलूँगी ।

चारुमती— किसलिए ?

निर्मल— देखूँगी, राजपूत की लड़की कैसे उस हत्यारे बाद-
शाह की बेगम बनकर कोर्निस करेगी ।

चारुमती—उम्र दिन मैंने उसकी तस्थीर पर सात मारी थी ।

निर्मल— मारी तो थी ।

चारुमती— उस लात से उसकी नाक टूट गई थी ।

निर्मल— दायाद टूट गई थी ।

चारुमती— दिल्ली चलकर मे अपनी उसी लात से घालमगीर
के राग रंगमहल में ही उसकी नाक तोड़ूँगी ।

निर्मल— तोड़ सकोगी ?

चारुमती— राजपूत की बेटी की लात है यह !

निर्मल— है तो, परन्तु जान से नाक ही तोड़नी है, तो एक
उपाय करना होगा ।

चारुमती—कौन उपाय ?

निर्मल— वही मेरा सिर ।

चारुमती— तेरा सिर ? क्या वह भी तोड़ना-फोड़ना होगा ?

निर्मल— अभी नहीं । अभी तो उससे काम लेना होगा ।
इसके बाद फिर यदि आवश्यकता हुई तो राजपूत
की चेटी की लात तो कहीं गई नहीं ।

चारुमती— वान कह, यकवाम न कर ।

निर्मल— राजकुमारी, क्या मचमुच, तुम उस पापस्थली-
दिल्ली के रंग-महल में जाते जो प्रविष्ट होना चाहती
हो ?

चारुमती— (घाँसू भरकर) और करोगी भी क्या ? एकबार
भारतेद्वारी घनकर देखूँ ।

निर्मल— हँसी न करो, आज से नवें दिन शाही फौज यहाँ
आ पहुँचेगी ।

चारुमती— तब मैं दिल्ली जाऊँगी ।

निर्मल— तुम ?

चारुमती— नहीं तो रूपनगर की ईंट-में-ईंट बज जाऊँगी ।

निर्मल— क्या राजहंसनी बगुने की सेवा करेगी ? क्या गिहनी
गोदड़ को करेगी ?

चारुमती— ऐसा कभी न होगा, सगी !

चारुमती— कहा तो, यहाँ पहुँचकर उन बन्दगुहूँ सुमनमान
की नाक टम तान में तोड़ूँगी ।

निर्मल— यह कर मरोगी ?

चारुमती— न कर सकूँगी, तो यह घण्टी है ।

निर्मल— क्या विष पीकर मरोगी ?

चारुमती— राजपूतानी फिर पैदा ही किसलिए होती हैं ।

निर्मल— (क्रोध से) कुत्ते की मौत मरने के लिए ! पर कहे देती हैं, यह न होने पाएगा ।

चारुमती— तब ?

निर्मल— एक उपाय है ।

चारुमती— क्या उपाय है ? है कोई ऐसा धीर-धीर जो क्षत्रिय कुमारी को लाज रवे श्रीर दिल्लीपति के साथ रात ठाने ? सभी तो राजपूत कुलकलंक मुगल बादशाहों के गुलाम हो गए हैं ।

निर्मल— भय भी धरती धीर धून्य नहीं हो पाई है, सखी ! भगवती वसुन्धरा जब धीरों का जनना धन्द पर देगी तो प्रलय हो जाएगी ।

चारुमती— हाय ! इस मुगलवश के षाहू ने राजपूतों के एक-एक बदन को धम लिया है । राजपूत-बाला धब किसकी धरण जाए ?

निर्मल— मेवाट के महाराणा राजसिंह की, जिनकी धीर-भूति सुम्हारे मन में बसी है, जिनकी तलवार धजेय है, जिनकी नगों में धीरधर प्रताप धीर गाँगा का रक्त बहता है, वह निर्भय सिंह मुगल-शक्ति से भय नहीं माना । धब तुम धीर-नगकोच ध्योड़कर ध्यमणी बनो गयी ! राजसिंह की धब निर्भयो ।

चारुमती— उनकी मैं पूजा करती हूँ। पर मैंने क्या ऐसी तपस्या की है कि उनकी चरणदामी बन सकूँगी।

निर्मल— (हँसकर) चरणदामी बनने की बात पीछे सोचनी जायगी, अभी तो यहाँ लियो कि एक राजपूत बाला आपकी शरण है, उसके धर्म की रक्षा कर सको तो करो।

चारुमती— ऐसी बेहवाई का काम मैं न कर सकूँगी। मैं उन्हें पत्र कैसे लिख सकती हूँ ?

निर्मल— विपत्ति में मर्यादा नहीं रहती, गमी ! मैं कहनी हूँ सो करो—राजा को पत्र लिखो। आज ग्यारस है। ब्याह की तिथि पंचमी है। ६ दिन का अयमर है। चेष्टा करने पर इन अवधि में सन्देश पहुँच सकता है।

चारुमती— पर यह सन्देश ले कौन जायगा ?

निर्मल— राजपुरोहित अनन्तमित्र को ठीक कर चुकी है। वे बड़े धर्मात्मा और राजपरिवार के शुभचिन्तक हैं।

चारुमती— वे यह कठिन काम कर सकेंगे ?

निर्मल— अवश्य करेंगे।

चारुमती— अच्छा ! पत्र पाकर भी तो राजाजी ने मेरी रक्षा करना न स्वीकार लिया तो ? मेरी रक्षा करना— अपना सर्वनाश करना है। कौन एक बालिका के लिए अपने राज्य पर विपत्ति माँगा।

निर्मल— सखी, जिस वीर की तुम पूजा करती हो वह क्या इतना कायर है कि शरणागत को भ्रम न करे और वह शरणागत भी एक निरीह राजपूत कन्या हो (मुस्कृत कर धीरे से) और मन-ही-मन उन्हें धरण कर चुकी हो ।

चारुमती— (हँसकर) दुष्टना न कर । पर पत्र लिखूँ कैसे ?

निर्मल— ठहरो ! मैं अनन्तमिश्र को बुलाने किसी को भेजती हूँ और पत्र लिखने की सामग्री लाती हूँ ।

[जाती है]

चारुमती—(रोने हुई) मैं वह विपला फूल हूँ जिसे सूँघने से मनुष्य की मृत्यु होती है । न जाने यह अभागिनी कितने वीरों का काल-रूप लेकर जन्मी है । क्या मैं वीरवर को जोखिम में डालूँ ? क्यों न आत्मघात कर प्राण दे दूँ । (रोती है)

[निर्मल आती है]

चारुमती— सखी, मेरा मरना ही अच्छा है ।

निर्मल— भावश्यकता होगी तो वह भी हो रहेगा, सखी ! वह तो हमारे बापें हाथ का सेल है । पर तुम्हें तो बादशाह आलमगीर की नारु लात से तोड़नी है । अभी उमका उपाय हो । मैं भी जरा यह तमाशा देखूँगी । सो, पत्र लिखो !

चारुमती— कैसे लिखूँ ?

निर्मल— तुम लिखो, मैं बोलती हूँ ।

चारुमती— नहीं, तू हो लिख !

निर्मल— (हँसकर) आज तो तुम्हीं लिखो, फिर कभी होगा तो मैं लिख दूँगी ।

चारुमती— मर (कतम बागज लेकर) बोल !

निर्मल— लिखो प्रियतम प्रा.....

चारुमती— (कतम बागज लेकर) मार खाएंगी, तू ! जा, मैं नहीं लिखती ।

निर्मल— (हँसते हुई) तब फिर अपनी मर्जी से लिखो ।

चारुमती— लिखने का वृद्ध काम नहीं है । भाग्य में जो होगा, हो जायगा ।

निर्मल— अच्छा लिखो— महाराजाधिराज !

चारुमती— (भिगकर) घागे बोन ।

निर्मल— आप राजपूत कुल निगोमणि हैं और मैं एक विपद-ग्रस्त राजपूत बाना । पत्रवाहक मेरे गुरु हैं । मेरे दुर्भाग्य से दिल्लीपति मुन्ह प्रभागिन को अपनी बेगम बनाना चाहता है, उमकी मेना मुन्हे लेने घाने हो यार्गी है । यद्यपि घनेक राजपूत बन्धाओं ने मुगल बादशाहों के पर्यंछु गोना बढ़ाई है.....

चारुमती— (रुकर) नहीं, यह टोर नहीं ।

निर्मल— (दुःख गोषकर) तब यह निगो— मैं प्राण दूँगी पर मुगलों की दागी न बनूँगी । (गोषकर) इगरा

कारण अभिमान नहीं—धर्म है। आप प्रतापी राजा-धिराज एवं समस्त राजपूतों के अधिपति और धीरवीर हैं, सो मैं आपको शरणागत हूँ।

चारुमती— वस इतना ही काफी है।

निर्मल— एक बात और—अब आप अपना धर्म निवाहिए।

चारुमती— (लिपकर) वस।

निर्मल— वस, अब दस्तखत कर दो। हाँ, क्या हानि है यदि बादशाह को नाक लात से तोड़ने की बात भी लिख दी जाय ? यह भी राजपूतवासा की प्रतिज्ञा है—महाराणा को उसका भी निवाह करना होगा।

चारुमती— (मुस्कराकर) देव, गुरुजी आए हैं या नहीं ? ऐसी बात भी क्या लिखी जाती है !

[एक दासी धानी है]

दासी— गुरुजी आए हैं।

निर्मल— उन्हें यहाँ भेज दे। (चारुमती से) अच्छा, अब मार्ग का क्या प्रबन्ध किया जाय ? गुरुजी बृद्ध हैं। परन्तु..... मर।

[गुरुजी घाते हैं]

अनन्तमित्र—(घागीवाँद देकर) मुझे किसलिए बुलाया है, बेटो !

निर्मल— निमन्त्रण है महाराज, बहुत से मालटाल गाने को मिलेंगे, साथ में स्वर्ण दक्षिणा भी।

गुरुजी— (हँसकर) भरो सदमी बेटो, यहाँ का अन्न ग्राते-ग्राते

बूढ़ा हो गया। अब इस ब्राह्मण को खाने-पीने का लोभ न दो। वही क्या काम है ?

निर्मल— गुरुजी, आपने क्रोध सुना है ? दिल्ली से दूल्हा भा रहा है।

गुरुजी— (उदास होकर) सुना है बेटी, पर उपाय क्या है। भारत के आकाश में ये हिन्दुत्व का नक्षत्र धसल हो रहा है।

निर्मल— गुरुजी, आपको कुमारी की रक्षा करना होगी ?

गुरुजी— इस ब्राह्मण के प्राण जाने से कुमारी की रक्षा हो सके तो आनन्द ही है।

निर्मल— प्राणों के जाने की बात तो नहीं है, पर जोगिम तो है।

गुरुजी— क्या करना होगा, बेटी ?

निर्मल— उदयपुर जाना होगा।

गुरुजी— (हँसकर) समझा। निरूपाल से बचाने के लिए रविमणी का सन्देश कृष्ण को पहुँचाना होगा।

निर्मल— (गुरुओं से भरी घंटी देकर) यह सीजिए, रावों के धरुदा जाऊँगा, परन्तु कृष्ण सर्व-सर्व.....

गुरुजी— (घंटी में से ४ घण्टी निकालकर) इतनी बटून है बेटी !

निर्मल— (घंटी में से ४ घण्टी निकालकर) इतनी बटून है बेटी !

गुरुजी— (घंटी में से ४ घण्टी निकालकर) इतनी बटून है बेटी !

निर्मल— (घंटी में से ४ घण्टी निकालकर) इतनी बटून है बेटी !

को माला । राणा अब पत्र पढ़ने लगे तो यह माला आप उनके गले में डाल दें । और सब कुछ आप पर प्रकट है ही—जैसे हो, राणा को राजी करलें ।

गुरुजी— (हँसकर) अच्छा बेटी, अच्छा ! तो अब मैं जाऊँ, राह लम्बी है ।

निर्मल— और समय कम । घाज ग्यारस है, व्याह की तिथि पंचमी है । आपको इससे पूर्व ही यहाँ लौट घाना होगा ।

गुरुजी— (चिन्ता करके) प्रभु की कृपा से ऐसा ही होगा । जाता हूँ बेटी !

निर्मल— जाइए !

[अनन्त मिथ जाते हैं]

[पर्दा बंदनता है]

पंचिवा दृश्य

[स्थान—उदयपुर के राजा का शमा-शवन : महाराणा अपने स्वर्गियों सहित गद्दी पर बैठे हैं । अनन्त मिथ सामने गढ़े हैं ।

गमय—प्रातःकाल ।]

राणा— तो आप सब मरदारों की क्या भर्जी है ?

मोहनसिंह शफावत—अन्नदाता, इसमें विचारने की क्या बात है ? मरणागत राजपूत घाना को विमुक्त नहीं किया जा सकता ।

राजसिंह

को माला । राणा जब पत्र पढ़ने लगे तो यह माला
आप उनके गले में डाल दें । और सब कुछ आप
पर प्रकट है ही—जैसे हो, राणा को राजी करलें ।
(हँसकर) अच्छा बेटी, अच्छा ! तो घब में जाऊँ,
राह लम्बी है ।

गुरुजी— और समय कम । आज ग्यारस है, व्याह की तिथि
निर्मल— पंचमी है । आपको इससे पूर्व ही यहाँ लौट आना
होगा ।

गुरुजी— (बिन्ता करके) प्रभु की कृपा से ऐसा ही होगा ।
जाता हूँ बेटी !

निर्मल— जाइए !

[पर्दा बदनता है]

[प्रनन्त मिथ्र जाते हैं]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर के राजा का सभा-भवन : महाराणा घने द्वारिकां
सहित गद्दी पर बंटे हैं । प्रनन्त मिथ्र सामने गढ़े हैं ।
गमय—प्रातःवाण ।]

राणा— तो आप सब सरदारों की क्या मर्जी है ?
मोहरुमसिंह सक्कावन—प्रन्नदाता, इसमें विचारने की क्या वान
है ? गुरणागत राजपूत बाला को विनुय नदी
क्रिया जा सक्ता ।

राजसिंह

घोलकी दलपन—राजपूत को बेटी, हिन्दूपति राणा को गरण
छोड़कर कहीं जाएगी, महाराज !

महाराज हरिसिंह—हमारी तलवारों का धार में काफ़ी पानी
है, उसका स्वाद इस बार मुगल चखेंगे ।

भाला मुलतानसिंह—सिंहनी जय सिंह का आश्रय लेती है तब
गोदड़ों का उगे क्या भय है ?

धीसोदिया माधोसिंह—महाराज, इस विषय में मोक्ष-विचार
करना हमारे लिए अपमान की बात है ।

राणा— वीर पुरुषों, प्रायः लोगों ने अपने योग्य ही बात
कही । प्रायः लोग योद्धा हैं, धार्मिक हैं, मूरमा हैं ।
मरना-मारना ही मूरमा की सोना है, धीर शरणा-
गत की रक्षा करना प्रत्येक धार्मिक का धर्म है ।

शुभ— (एक स्वर में चिल्लाकर) शरणागत धर्म !

राणा— निस्सन्देह मेवाड़ की भूमि पर शरणागत धर्म है ।
परन्तु भाइयों, राज-राज की बातें केवल वीरता से
ही पूरी नहीं होती । उनके लिए राजनीति और
मान-पोषे की बातें भी सोचना राजा का धर्म है ।
यह तो ठीक है कि शरणागत राजपूत वाला के
धर्म की रक्षा की जाय । परन्तु कैसे ? दिल्लीपति
का सोप हमारे ऊपर बढ़ता ही जाता है । परमान
पर परमान धर्म है और हम टाल-टूट करते जाते

राजसिंह

है। जजिया के विरुद्ध हमने पत्र लिखकर बादशाह को नाराज कर दिया है। शाही मर्जों के विरुद्ध हमने चित्तौड़ की मरम्मत कराई और कई ठिकाने ध्वस्त किए हैं। मथुरा से भागे हुए गुसाइयों को हमने शरण दी है। अब जो हम बादशाह को बेगम का हरण करेंगे तो निश्चय ही उसका हम पर पूरा कोप होगा, और वह दल-बल सहित हम पर चढ़ दौड़ेगा। तब क्या हम उसका मुकाबला कर सकेंगे? मुझे तो ऐसा दीखता है कि शाही सेना क्षणभर में सारे मेवाड़ को घानन-रानन में तबाह कर देगी। हमारे गाँव लूटे और जला दिए जाएँगे। स्त्रियों को बे-भाव रूप किया जाएगा। लहलहाती फूलों नष्ट कर दी जाएँगी और मेवाड़ की बीर-भूमि घपने घोरों के रक्त से लाल हो जाएगी। मेवाड़ पर यह विपत्ति केवल एक बालिका के लिए लाना क्या बुद्धिमानी की बात होगी?

रायत केसरीसिंह—मर्जों पाऊँ तो भ्रज करूँ। सेवक की दृष्टि में कर्तव्य-पालन के लिए हानि-लान नहीं देना जाना चाहिए। सिद्धान्त पर मर-मिटना घोरों की परिपाटी है। लोहूँ और लोहा, यही तो राजपूनों की सम्पत्ति है, और है मृत्यु उनका व्यवसाय। महाराज, दसवें राजनौत्रि हमें बना नहीं सकते। रदो घालमगोर

राजसिंह

के आक्रमण की बात। सो महाराज, वह तो आज नहीं तो कल होगा ही। बादशाह वहाँना खोज रहा है और मेवाड़ उसकी छाँवों में घुल-सा चुन रहा है। वह मेवाड़ को बिध्वंस करेगा ही और एक बार हम उससे लोहा लेंगे ही। वह कल न सही, आज ही सही।

राणा— (मुस्करा कर) यह तो मृत्यु है। परन्तु अपनी हमारी तैयारी में कमी है। अपनी तैयारी होने तक यथा-सम्भव युद्ध को टालना हमें उचित है।

कुँवर भीमसिंह—धीमानों को आज्ञा पाऊँ तो आज कल हम युद्ध को निमन्त्रण नहीं दे रहे। न किसी पर भत्याचार कर रहे हैं। हम केवल धन्याय और भत्याचार का विरोध कर रहे हैं। यह भी हम न करें तो हमारा राजपूत जीवन ही धिक्कार के योग्य है।

राणा— तो आप सब सरदारों की यह राय है कि राजकुमारी की प्रार्थना स्वीकार कर ली जाय।

सब— प्रसन्न।

राणा— चाहे भी जिस मूल्य पर।

सब— (सबसे अधिक) यह लोहा राजपूतों का धन है, शत्रु के मूल्य पर।

राणा— (अनार पड़े-पड़े) नरगुप्त-धन्य ! ब्राह्मण, राज-

राजसिंह

कुमारी से जाकर कह दो कि हम प्राण देकर उसकी रक्षा करेंगे।

प्रान्त मिथ—धन्य महाराजा, धन्य क्षत्रिय वीर, धन्य वीरेन्द्र (घाघे वदकर मोतियों की माला राणा के गले में डालकरे)
 घाघकी जय हो ! महाराज, राजकन्या तन, मन से घाघको वरण कर चुकी है। यद्यपि रूपनगर का घराना घाघके समक्ष अनि साधारण है, फिर भी महाराज, वह पवित्र मौलिकियों की गद्दी है। उस कुल में अभी दाग नहीं लगा है। राजकन्या चार-मती रूप-गुण-शील में सब भाँति थीमानों के योग्य है—अब घाघ चलकर राजकुमारी को विधिवत् ब्याह कर अपनी सेवा में लें जिससे धर्मपूर्वक घाघ उसकी रक्षा के अधिकारी हों।

मथ—

राजा—

गाधु ! गाधु ! यह प्रस्ताव बहुत उत्तम है।
 (गम्भीरता से) परन्तु, ब्राह्मण देवता ! क्या यह प्रस्ताव कुमारी ने विपत्ति में पड़ कर किया है ?

प्रान्त मिथ—नहीं श्रीमान् ! जिन वीर की यशोगाथा राज-पूताने के पर-पर गाई जाती है, और जिनके प्रताप का डका वीर-भूमि को जागृत कर रहा है, जो राज-पूत ज्ञानि मुकुटरत्न हैं। उन्हें पाकर कौन वाता-न धन्य होगी ! महाराज, वह राजपूत वाला मन-वचन में घाघकी महिमी ही पुरी थी। अब घाघ

। धर्मपूर्वक उसे अपनी

। इस सम्बन्ध में क्या मत

। अग्निदाता ! राजकन्याओं को
 बनाना तो राजपूतों का सनातन
 राजकन्या अब श्रीमानों को छोड़

।
 (न रहकर) अच्छा, अब एक बात विचा-
 रू गई ।

...यह क्या महागज !

। शाह अपनी ५० हजार मेना लिए रूपनगर की
 मारी को ध्याते पा रहा है । अब हम रूपनगर
 जाएं तो उदयपुर को अक्षिप्त नहीं छोड़ सकते
 और यदि हम मारी मेना लेकर भी जाएं और
 नाही मेना में मुठभेड़ हो जाए और कदाचित हम
 काम जाएं तब राजकुमारी की गधा का क्या उपाय
 होगा । यह तो फिर भी बादशाह के हाथ पड़कर
 रहेंगे ।

भाष्यार्थ—हमें मेना उद्योग करना चाहिए कि बादशाह की
 मेना के रूपनगर पहुँचने के पहिने ही, हम रूपनगर
 में कुमारी का उद्धार करके लौट जाएं ।

राणा— यह तो असम्भव है। आज चौदस है, पंचमी को विवाह का मुहूर्त है। हम यदि रात-दिन कूच करे तो ४ दिन में पहुँच सकते हैं। परन्तु समस्त सेना को लेकर इस प्रकार धावा मारना हो ही नहीं सकता—रास्ता ऊबड़-खाबड़ और दुर्लभ है।

दीवान फतहसिंह—एक युक्ति है।

राणा— वह क्या ?

दीवान फतहसिंह—श्रीमान थोड़ी-सी सेना लेकर रूपनगर जाकर कुमारी को व्याह लावें और कोई वीर सरदार मेवाड़ी सेना को लेकर रूपनगर और दिल्ली-मेवाड़ के तिराहे पर शाही सेना को रोक रखे। यह युक्ति बहुत उत्तम है।

सब—

राणा—

परन्तु कौन ऐसा वीर है—जो इतने अल्पकाल में ऐसे संकट को गिर पर ले सकता है। (सब गन्नाटा मारते हैं)

राणा— क्या कोई वीर सरदार इस सेना की सरदारी स्वीकार कर सकता है।

[सब गन्नाटे में रूठ जाते हैं]

कुंवर भीमसिंह—(गंभ्र होकर) महाराज, यदि मेवाड़ में सभी सरदार वचन-शून्य हैं तो इस संकट को धाजा...

रत्नसिंह—अन्नदाना की त्रय हो। यह मेवा में कर्तव्य।

[सब धन-धन्य करने हैं]

राणा— रत्नसिंह, तुम इस अल्पवय में यह असाध्य कार्य करोगे ? नहीं मैं तुम्हें यह जोखिम का कार्य नहीं दे सकता ।

रत्नसिंह— दुहाई अन्नदाता ! बूढ़ावतों का यह जन्मसिद्ध अधिकार है । महाराज, मैं बौढ़ा उठाता हूँ ।

राणा— परन्तु धीरवर इस काम में बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है ।

रत्नसिंह— मैं समझता हूँ महाराज !

राणा— धन्य, बहुत प्रबल है, उमठी सेना अन्नगिनत है ।

रत्नसिंह— सिंह गोदड़ों की भीड़ को चिन्ता नहीं करते ।

राणा— हमारी सेना बहुत थोड़ी है और उसे तैयारी का समय बिलकुल नहीं है ।

रत्नसिंह— हमारा अद्भुत शक्ति और तन्त्रवार यहाँ दोनों काफी हैं ।

राणा— परन्तु मुनो ! कल्पना करो, तुम बादशाह की सेना को न रोक सके, तो हमारा सभी प्रयत्न निष्फल होगा ।

रत्नसिंह— (तनवार छूकर) महाराज, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जबतक श्रीमान् कुमारी को ब्याह कर सकुशल उदयपुर न लौटेंगे, मैं शहीद सेना को घामे न बढ़ने दूँगा—न मैं मरूँगा, न गिरूँगा ।

मय— धन्य धीर ! धन्य !

राजसिंह

राणा— तुम्हारा साहस और सत्यप्रत धन्य है। परन्तु वीर !
 मैं तुम्हें ऐसे खतरे का काम सौंपते संकोच करता
 हूँ।

रत्नसिंह— तब मैं अभी यही धपना सिर अर्पण करूँगा महा-
 राज ! यह मेरा वीर-प्रत है।

राणा— अच्छी बात है। तुम्हारा वीर-व्रत घटल रहे। आधो
 मे तुम्हें समस्त मेवाड़ी सैन्य का सेनापति अभिषिक्त
 करना हूँ।

[अभिषेक की तामथी आती है। राणा रत्नसिंह को सेना-
 पति का पद देकर अपनी तलवार उसकी कमर में बाँधते
 हैं। सब धन्य-धन्य कहते हैं।]

राणा— वग ! अद्य समय कम और कार्य बहुत है। कल
 प्रातःकाल ही एक प्रहर रात्रि रहे हमारा कूच
 होगा। कुमार जयसिंह और भोमसिंह उदयपुर की
 रणवाली करेंगे। गोलकी दलपत और भाला
 गुलनानसिंह रत्नसिंह के माथ मेवाड़ी सैन्य के साथ
 रहेंगे। गज वेगगीसिंह और राठौर जोधासिंह
 हमारे साथ चलेंगे। जाधो ब्राह्मण, कुमारी को
 मंदंग दो। दोबानजो ! ब्राह्मण देवता को यथेष्ट
 दान-मान में सम्मानित करके मुरक्षा के माथ विदा
 करो।

[पर्दा बन्दना है]

दृठा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : मोलंछी दलपन के महल का प्रान्त भाग ।
रत्नमिह और उनकी नाबी पत्नी सोभाग्यमुन्दरी ।
गमन—गन्ध्याकाल ।]

सोभाग्यमुन्दरी—आपकी जय हो ! जाइए ।

रत्नमिह—एकदम विदा, कुमारी ! अभी हमारे मिलन की
उपा का उदय भी नहीं हुआ और विदा की घड़ी
आ गई ।

सोभाग्यमुन्दरी—यही तो राजपूती जीवन है । आप पित्रयी
होकर सीध लौटिए ।

रत्नमिह—(हंगहर) इनकी बहुत कम धागा है । हमारी गक्ति
बहुत कम है और सप्त प्रत्यन्त प्रयत्न है । फिर
हमारे गिर पर प्रत्यन्त गुस्तर भार है ।

सोभाग्यमुन्दरी—आप बोर हैं । आपको भय क्या है ?

रत्नमिह—कुछ नहीं, कुमारी ! मैं परीक्षा में उत्तीर्ण होऊंगा ।

सोभाग्यमुन्दरी—कौसी परीक्षा ?

रत्नमिह—भूल गई, तुम मेरी योग्या का प्रत्यक्ष प्रमाण चाहती
थी !

सोभाग्यमुन्दरी—वह मैं वा चुकी ।

रत्नमिह—कौसे ?

सोभाग्यमुन्दरी—आपने वह पट्टिन चीड़ा उटाया, इनो से ।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात.....

सौभाग्यसुन्दरी— क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं !

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यसुन्दरी— क्षत्रिय वीर तो ग्रान पर झुकते हैं, वे मर कर
अमर होते हैं—यह तो आप जानते ही हैं। मैं मूर्खा
कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा ।

सौभाग्यसुन्दरी— जाइए आप ! (घाँसों में प्रांगू भरकर) हम फिर
मिलेंगे ।

रत्नसिंह— गायद यहाँ या वहाँ ! (आकाश की घोर उँगली
उठाना है)

सौभाग्यसुन्दरी— (प्रांगू गिराकर) ऐसा न कहिए ।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है
कुमारी !

सौभाग्यसुन्दरी— शशी का अपराध क्षमा करें ।

रत्नसिंह— आह, वीरवान्ना ! तुम्हारी जैमी क्षत्रिय कन्याएँ ही
पुरुषों को वीर बनानो हैं, परन्तु ...

सौभाग्यसुन्दरी— परन्तु क्या.....

रत्नसिंह— वहाँ ?

सौभाग्यसुन्दरी— इति ।

रत्नसिंह— मेरी एक इच्छा थी ।

सौभाग्यसुन्दरी— क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व.....

सौभाग्यनुन्दरी— क्या ?

रत्नसिंह— एक बार

सौभाग्यनुन्दरी— कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए कहकर पुकारूँ ।

सौभाग्यनुन्दरी— (नजाकर) पुकारिए ।

रत्नसिंह— बिना अधिकार प्राप्त किए ?

सौभाग्यनुन्दरी— अधिकार कैसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का ।

सौभाग्यनुन्दरी— अधिकार तो प्राप्त है । मैं आपकी मन-वचन से दासी हूँ ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं ।

सौभाग्यनुन्दरी— क्यों ? मेरा आपका वाग्दान हुआ है । मैं धर्म में आपकी हूँ ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई ।

सौभाग्यनुन्दरी— वह भी समय पर हो जायगी ।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सौभाग्यनुन्दरी— घाह, इनने कानर न हों ।

रत्नसिंह— मुनो कुमारी !

सौभाग्यनुन्दरी— कहिए ।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ ।

सौभाग्यनुन्दरी— हाँ ।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात.....

सौभाग्यमुन्दरी— क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं ।

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यमुन्दरी— क्षत्रिय वीर तो घान पर जूझते हैं, वे मर कर
धमर होते हैं—यह तो घाय जानते ही हैं । मैं मूर्ख
कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा ।

सौभाग्यमुन्दरी— जाइए घाय ! (घानों में घाँस भरकर) हम फिर
मिलेंगे ।

रत्नसिंह— धायद यहाँ या वहाँ ! (घाय की घोर उँगली
उठाना है)

सौभाग्यमुन्दरी— (घाँस गिराकर) ऐसा न कहिए ।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है
कुमारी !

सौभाग्यमुन्दरी— दासी का अपराध क्षमा करें ।

रत्नसिंह— माह, वीरवाला ! तुम्हारी जैसी क्षत्रिय कन्याएँ ही
पुरुषों को वीर बनाने हैं, परन्तु

सौभाग्यमुन्दरी— परन्तु क्या.....

रत्नसिंह— वहाँ ?

सौभाग्यमुन्दरी— कृष्ण ।

रत्नसिंह— मेरी एक टन्ड्रा थी ।

सौभाग्यमुन्दरी— क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व.....

सोभाग्यमुन्दरी—क्या ?

रत्नसिंह— एक बार

सोभाग्यमुन्दरी—कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए वहकर पुकारूँ ।

सोभाग्यमुन्दरी—(नजाहर) पुकारिए ।

रत्नसिंह— बिना अधिकार प्राप्त किए ?

सोभाग्यमुन्दरी—अधिकार कंसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का ।

सोभाग्यमुन्दरी—अधिकार तो प्राप्त है । मैं आपकी मन-वचन से दामो है ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं ।

सोभाग्यमुन्दरी—क्यों ? मेरा आपका वाग्दान दृषा है । मैं धर्म से आपकी है ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई ।

सोभाग्यमुन्दरी—वह भी समय पर हो जायगा ।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सोभाग्यमुन्दरी—माह, दत्तने कानर न हों ।

रत्नसिंह— मुनो कुमारो !

सोभाग्यमुन्दरी—कहिए ।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ ।

सोभाग्यमुन्दरी—हाँ ।

रत्नसिंह— इससे क्या ? विजय करूँ तो बात.....

सौभाग्यमुन्दरी— क्षत्रियों की जय-पराजय दोनों ही विजय हैं ।

रत्नसिंह— कैसे कुमारी ?

सौभाग्यमुन्दरी— क्षत्रिय घोर तो घान पर जूझते हैं, वे मर कर
घमर होते हैं—यह तो आप जानते ही हैं । मैं मूर्खा
कहाँ तक कहूँ !

रत्नसिंह— तो जाऊँ कुमारी ! विदा ।

सौभाग्यमुन्दरी— जाइए आप ! (घाँसों में घाँसु भरकर) हम फिर
मिलेंगे ।

रत्नसिंह— दायद यहाँ या यहाँ ! (घाकाघ की घोर उँगली
उठाना है)

सौभाग्यमुन्दरी— (घाँसु गिराकर) ऐसा न कहिए ।

रत्नसिंह— (हँसकर) यह क्या ? परीक्षा तो कठिन ही होती है
कुमारी !

सौभाग्यमुन्दरी— दासी का अपराध क्षमा करें ।

रत्नसिंह— माह, योगवाला ! तुम्हारी जैमी क्षत्रिय कन्याएँ ही
पुरुषों को वीर बनाती हैं, परन्तु

सौभाग्यमुन्दरी— परन्तु क्या.....

रत्नसिंह— वहाँ ?

सौभाग्यमुन्दरी— कहिए ।

रत्नसिंह— मेरी एक इच्छा थी ।

सौभाग्यमुन्दरी— क्या ?

रत्नसिंह— जाने से पूर्व.....

सोभाग्यमुन्दरी—बया ?

रत्नसिंह— एक बार

सोभाग्यमुन्दरी—कहिए ?

रत्नसिंह— तुम्हें मैं प्रिए कहकर पुकारूँ ।

सोभाग्यमुन्दरी—(बजाकर) पुकारिए ।

रत्नसिंह— बिना अधिकार प्राप्त किए ?

सोभाग्यमुन्दरी—अधिकार कैसा ?

रत्नसिंह— पत्नी का ;

सोभाग्यमुन्दरी—अधिकार तो प्राप्त है । मैं आपकी मन-बचन से दासी हूँ ।

रत्नसिंह— ठीक है, पर धर्म से नहीं ।

सोभाग्यमुन्दरी—धर्म ? मेरा आपका आश्रय हुआ है । मैं धर्म से आपकी हूँ ।

रत्नसिंह— फिर भी विधि तो नहीं हुई ।

सोभाग्यमुन्दरी—वह भी समय पर ही आयगा ।

रत्नसिंह— अब समय नहीं है, कुमारी !

सोभाग्यमुन्दरी—आह, इतने कारर न हों ।

रत्नसिंह— सुनो कुमारी !

सोभाग्यमुन्दरी—कहिए ।

रत्नसिंह— मैं क्षत्रिय कुमार हूँ ।

सोभाग्यमुन्दरी—हाँ ।

सौभाग्यमुन्दरी—अवश्य मिलेंगे ।

रत्नसिंह—इस जन्म में अथवा उस जन्म में ।

सौभाग्यमुन्दरी—कीर्ति के पुल पर होकर ।

रत्नसिंह—मे घपना कर्तव्य पालन करने जाता हूँ । तुम घपना कर्तव्य पालन करना ।

सौभाग्यमुन्दरी—रूँगी ।

रत्नसिंह—इसी अल्पवय में ! आशा, प्रेम और आकांक्षाओं से परिपूर्ण मुलगते हुए हृदय को लेकर ?

सौभाग्यमुन्दरी—निश्चय स्वामी !

रत्नसिंह—बहुत कठिन है प्रिए ।

सौभाग्यमुन्दरी—अत्रियवाला के लिए नहीं ।

रत्नसिंह—तब विदा ।

सौभाग्यमुन्दरी—विदा ।

रत्नसिंह—स्मरण रहे, घपना कर्तव्य ।

सौभाग्यमुन्दरी—निश्चिन्त रहिए ।

रत्नसिंह—(जाता-जाता घूमकर कुमारी का आतिथन करता है फिर कुछ देर बाद) घप चला प्रिए, कर्तव्य का ध्यान रखना ।

सौभाग्यमुन्दरी—(रोकर) दामी पर इतना अविश्वास ?

रत्नसिंह—(घाँसू पोछकर) अविश्वास नहीं । परन्तु.....अच्छा अब विदा प्रिए !

सौभाग्यमुन्दरी—विदा प्रालोद्वर !

[रत्नसिंह तेजी से जाता है और सोभाग्यमुन्दरी जग भूमि पर जहाँ रत्नसिंह पड़ा था, सेट कर फूट-फूट कर रोती है]

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर: सोनकी दरपट का घर: सोभाग्यमुन्दरी घरेली छग्रे में नहीं, मैदान में गुमगिस्त वेना को देग रही है । समय—ब्रात.काल]

सोभाग्यमुन्दरी—(रगन) यही तो राजपूती शान है । राज-महल का यह विशाल प्राङ्गण वीरों से भरपूर होकर कैला दैदीप्यमान हो रहा है । चपल घोड़े कंगे धोरज रो रहे हैं । कब मालिक का सकेन हो और वे अपनी उद्यनती चाल का रंग दिखायें । वीरों के शस्त्र प्रभान को इन मनोरम पूरा में किंग भानि चमक रहे हैं ! वह मेरे प्राणों के धन स्वत घोड़े पर सवार सेना का निरोक्षण कर रहे हैं । उनके कण्ठ का वह मुक्काहार कंगे प्यारा लग रहा है । कन जब उन्होंने मुझे दुपा तो जैसे जीवन का नया धध्याय प्रारम्भ हो गया । मात्र यह प्रभात कंगे मनोरम दीग रहा है । ऐसा हो तो जीवन का प्रभात होना है । (बिनार होकर) त्रिवे ! त्रिवे ! कंगे प्यारा छन्द था । गुनकर रोम-रोम

पुलकित हो गया। इच्छा होती है, बारम्बार वह शब्द सुनूँ। वही शब्द, वही मधुर संगीत-स्वर से भी अधिक मधुर स्वर ! (चोंककर) परन्तु.....

हायरे, राजपूत जीवन ! (आँसू पोंछकर) नहीं। आँखों में आँसू भरकर मुझे अपशकुन नहीं करना चाहिए। पृथ्वी और आकाश के देवता उनको रक्षा करेंगे। यह देखो, वे इसी ओर को कुछ संकेत कर रहे हैं। देखो, घोड़े पर झुककर उन्होंने क्या कहा ! यह कौन है ! घरे, यह तो उनका प्रियभृत्य गुलाब है। यह भी गर्दन टेढ़ी करके मेरी ओर को देर रहा है। लो, यह इधर ही को चला। यह आ रहा है वह। स्वामी ने मेरे लिए कुछ सन्देश भेजा है। मेरे स्वामी ने। कल उन्होंने कहा था—प्रिये ! प्रिये ! ओफ ! (आनन्दविभोर होकर चुन हो जाती है)

[कक्ष में गुलाब आता है।]

गुलाब— जुहार दाड़ी रानी !

रानी— ठाकुर, कैसे आए हो ?

गुलाब— स्वामी का एक सन्देश है रानी ?

रानी— क्या सदेश है, कहो।

गुलाब— वे झुक कर रहे हैं।

रानी— उनकी यात्रा शुभ हो। वे विजयी होकर लौटें।

गुलाब— परन्तु.....

- रानी— परन्तु क्या ?
- गुलाब— उन्होंने कहा है।
- रानी— क्या कहा है ?
- गुलाब— कैसे कहें ?
- रानी— कहो ठाकुर।
- गुलाब— कहा है, इस काल युद्ध से जीते जी बचकर घाना सम्भव नहीं है।
- रानी— क्षत्रिय का वीरगति प्राप्त होने से बढ़कर सीमाय क्या है।
- गुलाब— परन्तु वे द्विविधा में पड़े हैं।
- रानी— द्विविधा ? युद्ध घाना के समय क्षत्रिय को द्विविधा ?
- गुलाब— वे रातभर द्विविधा में रहें।
- रानी— छो: छो: रातभर ? क्या द्विविधा है, मुन्नू तो मैं।
- गुलाब— पापकी द्विविधा है रानी !
- रानी— मेरी द्विविधा कौसी ?
- गुलाब— वे कहते हैं, पाप धनी मुसा हैं, कच्ची उम्र है, गनार धनी देता नहीं है। यदि कुछ उल्टा-सीधा हो गया तो पाप कैसे क्षत्रिय-बाला का वरिष्ठ प्रत्यूरां कर सकेंगे ?
- रानी— क्यों ? क्या मैं क्षत्रिय-बाला नहीं हूँ।
- गुलाब— पापकी दृष्ट घायु घानन्द उपनोण ही है।
- रानी— पर क्षत्रिय-बाला जब घाहे घात्मोत्पन्नं कर मरानो

है। उनसे कहो, वे निश्चित होकर शत्रुसे लोहा लें और अपना कर्त्तव्य-पालन करें। मैं अपना कर्त्तव्य-पालन करूँगी।

गुलाब— मैने समझाया था रानीजी, पर वे निरन्तर तुम्हारी ही चिन्ता कर रहे हैं।

रानी— छीः, युद्ध काल में स्त्री की चिन्ता।

गुलाब— वे प्रमाण चाहते हैं।

रानी— कैसा प्रमाण ?

गुलाब— जिसे पाकर वे आपकी मोर से निश्चित होकर शत्रुसे लोहा ले सकें।

रानी— (विचार कर) ऐसा प्रमाण चाहते हैं ?

गुलाब— हाँ रानीजी, आपको उनकी द्विविधा दूर करनी होगी।

रानी— (कुछ देर गम्भीर मनन करके) अच्छा, मैं तुम्हें प्रमाण देती हूँ, उसे अपने स्वामी को देकर कहना कि यह हाड़ी रानी का प्रमाण है, अब निश्चित होकर शत्रुसे मुठ करें।

गुलाब— जो आज्ञा रानीजी !

रानी— टाकुर, सनिक सावधान हो। तुम्हारी तलवार कंसा है देखूँ ?

गुलाब— (कुछ इरकर तलवार देता हुआ) वह प्रति साधारण है, रानी जी !

- रानी— फिर भी राजपूत की है। इतने बड़े-बड़े काम किए होंगे। क्यों? तुम तो वीरवर के सेवक हो।
- गुलाब— यह तलवार उन्हीं का दो हुई है रानीजी, उनके बाल-काल में सेवक ने इसी तलवार से उन्हें तलवार चलाना सिखाया है।
- रानी— (तलवार की धार परख कर) पानीदार चीज है। अच्छा, तो तो प्रमाण, अपने स्वामी को दे देना। (विजली की भाँति तेजी से भरपूर हाथ बदन पर मारती है, फिर बटकर धरती में गिर पड़ता है, धड़ झूमता है। क्षण भर में धर के लोग जमा हो जाते हैं। गुलाब हलक-बलक लड़ा खड़ा जाता है।

[पराबदनना है]

प्राठवाँ दृश्य

- [स्थान—रूपनगर धामुष्ठा के मंदिर का बाहरी भाग; समय— प्रातःकाल। स्त्री-पुरुष धा-जा रहे हैं। मंदिर में से होम की ध्वनि धा रही है। श्राद्धगु वेद-पाठ कर रहे हैं। एक घोर से दो यवन सैनिक धाकर चतूरे पर बँठ जाते हैं। दूसरे घोर से विग्रह गोनवाँ घोर दुर्बल हाथ बाँधे करते धाते हैं]

- विक्रम— मैं कहे देता हूँ कि जब तक शरीर में प्राण हैं मैं-
 ध्याह नहीं होने दूँगा । •
- दुर्जन— क्या करोगे तुम ?
- विक्रम— इस तलवार की धार का रस.....
- दुर्जन— रहने दो तलवार, बादशाह की ५० हजार सेना के
 सामने तुम्हारी तलवार क्या करेगी ? फिर जब
 राजा ही घपना उग्र है ।
- विक्रम— कौन उस छोकरे को राजा कहता है, राजा मैं हूँ ।
- दुर्जन— यों तो मैं भी कह सकता हूँ कि सेनापति मैं हूँ ।
- विक्रम— तुम रूपनगर के सेनापति हो ही, दुष्ट राजा ने तुम्हें
 पदभ्युत कर दिया तो इससे क्या ?
- दुर्जन— तुम्हारे राजा कहने ही में क्या सार है । (निराश
 होकर) हमारी शक्तियाँ सीमित हैं । हम कुछ न कर
 सकेंगे ।
- विक्रम— घपने प्राण तो दे सकेंगे ।
- दुर्जन— तुमने क्या सोचा है ? मुना है, दाही सेना भाजकल
 में घा पहुँचेगी ।
- विक्रम— हमने गुप्तरूप से वीरों का संगठन किया है । दो
 हजार राजपूत मरने-मारने को तैयार हैं ।
- दुर्जन— वे क्या बादशाह की ५० हजार सेना से मुकाबिला
 कर सकेंगे ?
- विक्रम— (शान में कुछ बहकर) समझे ! हमें धएण-धएण पर

प्राया है।

दुर्जन— (पादचर्यं से) क्या सच ?

विक्रम— (धोरे में) अनन्तमित्र को गए आज सातवां दिन है।

दुर्जन— तब तो प्राणा होता है।

विक्रम— चलो फिर, उसी भग्न मन्दिर में गुप्तमन्त्रणा होगी।
नव लोग पहुँच गए होंगे।

दुर्जन— चलो। (पीक कर) हैं, मन्दिर के चबूतरे पर ये यवन
सैनिक कौन हैं ?

विक्रम— क्या साही सेना घा पहुँची ?

दुर्जन— दुष्ट क्रियों को घूर रहे हैं।

विक्रम— उनका अपमान कर रहे हैं। (शंनों घाये बड़ों हैं)

विक्रम— (सैनिकों से) कौन हो तुम ?

एक सैनिक—(हड़ग से) इतना भी नहीं देख सकते, इन्सान हैं।

विक्रम— यहाँ क्यों बंटे हो, यह मन्दिर है। उठो चलते-फिरते
नजर घापो।

दुर्जन— (हँकर) चले जाएँगे। बंटे हैं, कुछ तुम्हारा सेते
नो नहीं।

विक्रम— यहाँ बंटने का तुम्हारा काम क्या है ?

पद्मिनी मन्त्रि— ज्यादा कुछ नहीं, बरा दोशरवाजी।

विक्रम— (दुर्जन से) मन्दिर में दित्तगो। उठो नहीं से।

विपारी— अपना काम देखो तुम सात-गोने न बनो, करना
हमारी खदान धीरे तेग साथ ही चलती है।

फूटें वंदी नैन ।

नहीं आए ।

नहीं आए ।

[रोती है और दोनों हाथ से मुँह ढँक लेती है]

[निर्मला घाती है]

निर्मला— रोने से क्या होगा ?

राजकुमारी—तब तू हँस । हँसने से शायद कुछ हो जाए ।

निर्मला— समय आएगा तब हँसूँगी, अभी काम की बात करो ।

राजकुमारी—काम की क्या बातें हैं ?

निर्मला— कुछ उपाय सोचना होगा ।

राजकुमारी—उपाय कैसा ? शाही सेना परसों यहाँ आ पहुँचेगी । भाई ने तो बादशाह का साला बनने का इरादा पक्का कर ही लिया है । उन्हें इस सिलसिले में जागोरे मिलेंगी । अब मुझ बबला का रक्षक कौन है ?

निर्मला— रक्षक भगवान हैं । पर हमें रोकर नहीं, बुद्धि लड़ाकर काम करना चाहिए ।

राजकुमारी—तू बुद्धि लड़ाकर देख ।

निर्मला— एक युक्ति है ।

राजकुमारी—क्या ?

निर्मला—उदासन का श्रत करो ।

राजकुमारी—किसलिए ? सुहाग रहे, इसलिए ?

निर्मला— यह बात अभी रहे । अभी तो इसका गूढ़ उद्देश्य यह होगा कि ३ दिन का हमें घोर समय मिल जायगा । तीन दिन अभी बाकी हैं । ६ दिन में कुछ न कुछ हो हो रहेगा ।

राजकुमारी—क्या होगा ? बादशाह की विपुल सेना तीन दिन में सारे कुए-तालाबों का पानी पी जायगी । सारे नगर का घन्न खा जायगी । इससे तो यही उत्तम है कि मैं आज ही विष खा लूँ । बादशाह मार्ग से लौट जाए ।

निर्मला— मुनो ! घनन्त मिश्र को गए आज पांचवाँ दिन है । यदि विष-बाधा न हुई तो वे पंद्रह भी लिए घोर सहायता लाय लेकर चल भी दिए । ३ दिन में अवश्य राणा घा जाएँगे यह मेरा मन कहता है ।

राजकुमारी—भार्इ मानेंगे ?

निर्मला— महारानी उन्हें मना लेंगी । मैं महारानी को राजी कर लूँगी ।

राजकुमारी—घोर जो वे न माने ?

निर्मला— तो भारतेश्वरी स्वयं उन्हें दृष्टम देंगी । किमती मजाल है, फालगुनपुर की मलिहा का दृष्टम टाल मके ।

राजकुमारी—नू मर ।

निर्मला— अभी नहीं । तुम्हारे हाथ पीले हो जाय तब ।

फूटें बेरो नैन ।

नहीं आए ।

नहीं आए ।

[रोती है और दोनों हाथ से मुँह ढँक संती है]

[निमंता धाती है]

निर्मला— रोने से क्या होगा ?

राजकुमारी—तब तू हँस । हँसने से शायद कुछ हो जाए ।

निर्मला— समय आएगा तब हँसूँगी, अभी काम की बात करो ।

राजकुमारी—काम की क्या बातें हैं ?

निर्मला— कुछ उपाय सोचना होगा ।

राजकुमारी—उपाय कौसा ? चाहो सेना परतों यहाँ भा पहुँचेगी । भाई ने तो बादशाह का साला बनने का इरादा पक्का कर ही लिया है । उन्हें इस सिलसिले में जागोरे मिलेंगे । अब मुझ अयला का रक्षक कौन है ?

निर्मला— रक्षक भगवान हैं । पर हमें रोकर नहीं, बुद्धि लड़ाकर काम करना चाहिए ।

राजकुमारी—तू बुद्धि लड़ाकर देस ।

निर्मला— एक मुक्ति है ।

राजकुमारी—क्या ?

निर्मला—उदापन का शत्रु करो ।

राजकुमारी—किसलिए ? मुहाग रहे, इसलिए ?

निर्मला— यह बात अभी रहे । अभी तो इसका गूढ़ उद्देश्य यह होगा कि ३ दिन का हमे घोर समय मिल जायगा । तीन दिन अभी बाकी हैं । ६ दिन में कुछ न कुछ हो हो रहेगा ।

राजकुमारी—क्या होगा ? बादशाह की विभुल सेना तीन दिन में सारे कुण्ड-नालावां का पानी पी जायगी । सारे नगर का घन खा जायगी । इससे तो यही उत्तम है कि मे घाज हो विप खा लूँ । बादशाह मार्ग से नोट जाए ।

निर्मला— मुनो ! घनन्त मिथ को गए घाज पांचवां दिन है । यदि विष्ण-बाधा न हुई तो वे पहुँच भी लिए घोर सहायता साथ लेकर चल भी दिए । ३ दिन में अवश्य राणा घा जाएँ वह मंग मन कहना है ।

राजकुमारी—भाई मानेंगे ?

निर्मला— महारानी उन्हें मना लेंगी । मे महारानी को राजी कर लूँगी ।

राजकुमारी—घोर जो वे न मानें ?

निर्मला— तो भारतेश्वरी स्वयं उन्हें दृष्टम देंगी । द्रिजली मन्त्राल है, घातमगौर को मलिका का दृष्टम टान नके ।

राजकुमारी—नू मर ।

निर्मला— अभी नहीं । तुम्हारे हाथ पाने हो जाय तब ।

राजकुमारी—(फ़ीकी हँसी हँसकर) अरी चिन्ता न कर, सब दुखों की दवा मेरे पास यह है। (विषमरी भंगूठी दिखाती है) ।

निर्मला— राजकुमारी, तुम जुग-जुग जिम्नो। मैं जाकर महारानी से कहती हूँ, तुम तनिक विश्राम करो।

राजकुमारी—(रोती हुई) भव मैं चिर-विश्राम करूँगी, सखी !
(माँझ पोंछती है) ।

[निर्मला रोती हुई जाती है]

[पर्दा गिरता है]

चौथा अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—रूपनगर का राजमहल : राजा रामसिंह और विक्रमसिंह ।
समय—मध्याह्न]

रामसिंह— (धरती में पंर पटक कर) मैं कहता हूँ, प्रापने यह साहस ही कैसे किया ? शाही घादमी को प्रापने घाय देखा न ताव, राट से कत्ल कर दिया । (कुछ टहर कर) अब जवाब तो मुझे देना होगा, प्रापको नहीं । राजा मे हूँ—प्राप नहीं । प्राप क्या सोच रहे हैं, काकाजो !

विक्रमसिंह—यही सोच रहा हूँ कि रूपनगर के राजा रामसिंह हैं, विक्रमसिंह नहीं ।

रामसिंह—गो तो हे हो । हमो से मे पूछना हूँ कि मेरे बिना हुन के प्रापने शाही सिपाहो को कैसे कत्ल किया ?

विक्रमसिंह—हंसे बताऊँ । कोई शाही सिपाही यहाँ हाजिर होगा तो अभी राट से जयना तिर काट लेता ।

रामसिंह—यह तो अन्धेर है। अजो में पूछता हूँ क्यों ? किस-
लिए ?

विक्रमसिंह—यह आपने कब पूछा ?

रामसिंह—अच्छा, अब सही। कहिए, आपने क्यों उसका सिर
काट लिया ?

विक्रमसिंह—यह देवी के मन्दिर के सिंहद्वार पर बैठा स्त्रियों को
घूर रहा था। मैंने जब उसे चले जाने को कहा तो
वह गुस्ताखी कर बैठा। विक्रमसिंह सोलकी को यह
सहन कहाँ ? भट से तलवार सूँती घोर खट से
भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। वस, इतनी ही सी तो
बात है, महाराज !

रामसिंह—आप हमारे काका हैं—तो, क्या मेरे राज्य में मन-
मानी करेंगे।

विक्रमसिंह—तुम राजा हो गए तो क्या अपने बड़े-बूढ़ों को कुछ
भी न समझोगे ? धर्म का तिरस्कार करोगे ? मर्यादा
घोर नीति सबको धता बताओगे ?

रामसिंह—यह तो गूब रही। आप क्या मुझसे कैफियत तलब
करेंगे। मुझसे ? राजा से ?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं ? तुम्हें राजा बनाया किसने है, हमो ने
न ? अगर तुम मत्स्य-धर्म से राज-काज करोगे तो
राजा नगी तो जैसे हमने तुम्हें राजा बनाया है, उसी
तरह राज्य से उनार भी देंगे।

रामसिंह—आपकी इतनी मजाल । आप राजा से ऐसी बातें कहते हैं ?

विक्रमसिंह—यों नहीं । एक तो मैं राजा का काका, दूसरे मेरी प्यारी यह तलवार जब तक मेरे पास है, निर्भय हो सत्य कहूँगा । उसे तुम रोक न सकोगे ।

रामसिंह—(गुस्से से) नहीं, मेरे राज्य में आप मनमानी न करने पाएँगे ।

विक्रमसिंह—(गुस्से में) विक्रम सांनकी के रूपनगर में रहते तुम मनमानी न करने पाओगे ।

रामसिंह—मैं राजा हूँ ।

विक्रमसिंह—धनीति करोगे तो राजा नहीं रहने पाओगे ।

रामसिंह—मैं आपको गिरफ्तार करना हूँ । (पुकार कर) कोई है ?
[दो भेदक निराहो घाते हैं]

रामसिंह—इन्हें बांध लो ।

विक्रमसिंह—(हँसकर) क्या कहने हैं ! (तनवार मूँतकर) त्रिसमें दम हो, यह घागे घाए ।

[दोनों निराहो कड़क जाते हैं]

रामसिंह—यदजातो ! क्या देगते हो, घागे बड़ो !

विक्रमसिंह—तुम गुद हो क्यों नहीं घागे बड़ते !

रामसिंह—(तनवार मूँतकर) यही सही । जो गवा के घपमान ना फल भग्यो ।

विक्रमसिंह—(घर क्या कर) गमसिंह, यचरन मे मीने तुम्हे

रामसिंह—यह तो अन्धेर है। यजी में पूछता हूँ क्यों ? किस-
लिए ?

विक्रमसिंह—यह आपने कब पूछा ?

रामसिंह—अच्छा, अब सही। कहिए, आपने क्यों उसका सिर
काट लिया ?

विक्रमसिंह—वह देवी के मन्दिर के सिंहद्वार पर बँठा खियों को
घूर रहा था। मैंने जब उसे चले जाने को कहा तो
वह गुस्ताखी कर बँठा। विक्रमसिंह सोलंकी को यह
सहन कहाँ ? भट से तलवार सूँती और छट से
भुट्टा-सा सिर उड़ा दिया। बस, इतनी ही सी तो
बात है, महाराज !

रामसिंह—आप हमारे काका हैं—सो, क्या मेरे राज्य में मन-
मानी करेंगे।

विक्रमसिंह—तुम राजा हो गए सो क्या आपने बड़े-बूढ़ों को कुछ
भी न समझोगे ? धर्म का तिरस्कार करोगे ? मर्यादा
और नीति सब हो घना बताओगे ?

रामसिंह—यह तो ग़ुब रही। आप क्या मुझसे कंफियत तलब
करेंगे। मुझसे ? राजा से ?

विक्रमसिंह—झों नही ? तुम्हें राजा बनाया किनने है, हमी ने
न ? धनर तुम मत्व-कर्म से राज-नाज करोगे तो
राजा नही नी जैसे हमने तुम्हें राजा बनाया है, उसी
तरह राज्य से उतार भी देंगे।

रामसिंह—आपकी इतनी मजान । आप राजा से ऐसी बातें कहते हैं ?

विक्रमसिंह—क्यों नहीं । एक तो मैं राजा का काका, दूसरे मेरी प्यारी यह तलवार जब तक मेरे पान है, निर्भय हो सत्य कहूँगा । उसे तुम रोक न सकोगे ।

रामसिंह—(गुस्से से) नहीं, मेरे राज्य में आप मनमानी न करने पाएँगे ।

विक्रमसिंह—(गुस्से से) विक्रम सोलंकी के रूपनगर में रहते तुम मनमानी न करने पाओगे ।

रामसिंह—मैं राजा हूँ ।

विक्रमसिंह—झनोति करोगे तो राजा नहीं रहने पाओगे ।

रामसिंह—मैं आपको गिरफ्तार करता हूँ । (पुकार कर) कोई है ?

[दो सेवक गिराही आते हैं]

रामसिंह—रुहें बांध लो ।

विक्रमसिंह—(हँसकर) क्या कहने हैं ! (तलवार घुंठकर) जिसमें दम हो, वह भागे आए ।

[दोनों गिराही छिटक जाते हैं]

रामसिंह—बदजाओ ! क्या देशते हो, भागे बड़ो !

विक्रमसिंह—तुम गुद हो क्यों नहीं भागे बड़ते !

रामसिंह—(उत्तगर घुंठकर) यही नहीं । तो राजा के अपमान ना फन चणों ।

विक्रमसिंह—(नार उठा कर) रामसिंह, यत्न में मैंने तुम्हें

कितना तलवार चलाना सिखाया था—पर तुझे कुछ न थाया । देख, वार इस तरह किया जाता है । (वार करता है—राजसिंह की तलवार झन्नाकर टूट जाती है) कह—सिर काट लूँ या छाती फाड़ डालूँ !

राजसिंह— राजा के अग्रमान का बदला समय पर लिया जायगा ।
[जाता है]

[पादुलसिंह कई सिपाहियों के साथ आता है]

बिक्रमसिंह—पादुलसिंह, अभी हमें बहुत से काम करने हैं । कुछ चाही सैनिक किले में ठहर रहे हैं और बादशाह के आने की प्रतीक्षा में हैं, पर बादशाह अभी तीन दिन की मंजिल पर है, आज वे किसी हालत में पहुँच नहीं सकते, किन्तु बियाह का मुहूर्त तो आज ही है, सायपान रहो । सूर्यास्त के बाद सभी चाही सिपाही कैद कर लिए जाएँ और महलों के सब द्वार और राहों पर अपने विद्यस्त जनों का पहरा रहे । (शान में वृष रह कर) ज्यों ही यह संकेत कोई कहे—उसें घेसटके भीतर आने दो । जो यह संकेत न बोले, उसे तुरन्त मार दो । जाओ ।

पादुलसिंह—ओ आशा महाराज !

[पादुलसिंह जाता है]

बिक्रमसिंह—महाराजा को आज सूर्यास्त तक यहाँ आ जाना चाहिए—मुझे ठीक ममाचार मिला था—परन्तु वे

अभी तक नहीं आए हैं, सूर्यास्त में अब सिर्फ दो घड़ी दोप हैं। वादशाह को भी आज रूपनगर के सियाने पर आ जाना चाहिए था। पर वह भी अभी दूर है। यह क्या मामला है। देखूँ, आज राजकुमारी की रक्षा कैसे होती है।

[जाता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—नगर के महल का वीसवा भाग : महल में ब्याह की धूम-धाम हो रही है। गणिका चारमती का धंगार कर रही है।

राजिनें गीत गा रही है। समय—उन्ना । चारमती

पुदवाण घामू बहाजी हुई बंटी है। निर्मला जड़ाऊ

केवरीं का पात लेकर जाती है।]

निर्मला— जड़ाऊ गहने पहनी कुमारीजी, आज तुम्हारे मुहाग का दिन है।

चारमती— पहना दे मरती, मुहाग न गही मुहाग का स्यांग ही गही। लायो देगूँ वो दुलहिन कैसे सजा करती हैं ? मूय सजा दो, दुलहिन बनाओ। (रोजे है)

निर्मला— (भीरे में) दो: मुहाग के समय रोती हो मरती ! धोरन परो। तुम्ही पधोर होगी वो फिर हम क्या करेंगी ?

चारुमती— अरी कैसे धीरज धरूँ, अभी तक राणाजी नहीं आए ।

निर्मला— और न बादशाह की फौज का ही कहीं पता है, ताही सेना का पता लगाने कासिद दीड़े फिर रहे हैं ।

चारुमती— मरे वह मुग्धा ! उनकी तलाश के लिए भी किसी को भेजा है ?

निर्मला— काका विक्रमसिंह ने अपने चर लगा रखे हैं । उन्हें आशा है!

चारुमती— आशा, आशा, हाय यह आशा कौसी भारी चीज है । परन्तु सखी, यह मेरी रक्षा करेगी । (घँगूठी दिखाती है) इसमें हलाहल विष भरा है ।

निर्मला— (भागू भरकर) मरें तुम्हारे दुश्मन, तुम जीओ सखी ! (भागू पोंदकर पीने से कान में) इसमें कुछ भेद मालूम होता है ।

चारुमती— कौसा भेद ?

निर्मला— न बादशाह आए न राणाजी, कहीं मार्ग में मुठभेड़ हो गई हो तो..... ।

चारुमती— हं परमेश्वर, क्या होने वाला है !

निर्मला— गव टोक होगा । चुप । वह राजा घा रहे हैं,
[रामसिंह स्वयं भाव में आता है]

रामसिंह— (राजत) बड़ी मुश्किल है । हर जगह कमी ही कमी नजर आती है । बहुत कोशिश करता हूँ कि सब

ठीक-ठाक रहे—मगर जहाँ देखता है, कतर है।
 वादनाह सलामत अभी नहीं आए। दिन छिप रहा
 है, विवाह का मुहूर्त निकट आ गया। उधर बन्दो-
 बस्ता देखता है तो.....(कुछ सोचकर) खैर, देखा
 जाएगा। (पुकार कर) कोई है ?
 [एक नेपथ्य आता है]

सेवरु— महागज का क्या आज्ञा है ?

रामसिंह— (शोक में) कामदार साहेब कहा हैं, बदनसीब !

सेवरु— (हाथ जोड़कर) सरकार ज्योक्तियों पर हाजिर हैं।

रामसिंह— तो उन्हें यहाँ ले आ। सड़ा-सड़ा क्या मुँहे लाएगा ?

सेवरु— जो आज्ञा !
 [आता है]

रामसिंह— (आफ में) राजकुमारी, तुम्हें जानना चाहिए कि तुम
 आज भारतेन्दवरी बनने जा रही हो। तुम्हारे भाग्य
 पर बड़ो-बड़ो राजकुमारियों को दाह होगी। (कुछ
 रुक कर) हाँ, मैं तुम्हें.....।

पारमनी— (शोक में) चुन रही भाई.....।

रामसिंह— (नर्मो से) समझ गया। कानपुर के राजा को डाँटने
 डाँटने का सब तुम्हें अधिकार हो गया है, तुम टहरो
 मग्राणी, बड़े-बड़े महाराजाधों को डाँट सकना हो।
 (इंगर) मगर देना, वादनाह को मुट्टी में रखना,
 मुट्टी में !
 [कानपुर आता है]

की स्त्रियो मातो है]

चारुमती— (माता को देखकर लिपटकर) माता, इस कृतघ्न पुत्रो को क्षमा करना ।

राजमाता—बेटो तेरा सौभाग्य अबल रहे । (राजसिंह से) महाराज, राजपूत-कन्या का आपने उधार कर अपने योग्य ही कार्य किया है । हमसे कुछ भेट-भलाई तो बन नहीं पड़ी तथापि यह प्रेमचिह्न ग्रहण करें । [बहुमूल्य मोतियों की माला गले में डालती है] ।

राजसिंह—अवसर देखकर ही सब कुछ होता है, अतः अभी तो हम तुरन्त ही जाते हैं (विजयसिंह से) आपको हम रूपनगर का महाराज स्वीकार करते हैं । (घरनी जड़ाऊ तलवार उनकी कमर में बांधते हैं)

[जय जय, महाराज की जय, मेवाड़गढ़ की जय बिल्लाते हैं ।]

[पर्दा गिरता है]

तीसरा दृश्य

[स्थान — रूपनगर घीर दिन्नी वा तिराहा : शाही मेना की छावनी पड़ी है । बुड़ की तराहो के चिह्न द्वापर-उपर दिगाई पडने है बादशाह अपने शीमे में दिन्नेरगा से जाते करते है ।

ममय—राज ।]

बादशाह— क्या कहा, मेवाड़ की फौज ?

दिलेरसा— जो हाँ, जहाँपनाह ! यह राना की फौज थी ।
 बादशाह— मगर हम मेवाड़ पर तो चढ़ाई नहीं कर रहे थे !

दिलेरसा— मैंने कहा था हुजूर, फौज के सरदार ने लापरवाही
 से जवाब दिया, हमें काटकर जहाँ जाना हो चले
 जाओ ।

बादशाह— कौन था, वह बदनमीव ?

दिलेरसा— वह एक कम उम्र नोजवान था । सभी रेलें भीगी
 थीं । उसकी छाँियों में घाग, बोली में तूफान, तल-
 चार में क्यामत घोर भयट में विजली थी । वह
 बहनत का पुतला बना था । उसके गले में एक
 घोरत का कटा हुआ सिर लटक रहा था ।

बादशाह— घोरत का सिर ?

दिलेरसा— जो हाँ, हुजूर ! वह मरने के शराब से घाया था,
 शाही फौज में यह जिघर गया, काई-नी चौरना
 पला गया । वह तिल-निल कट कर गिरा । यहाँ
 वह शाही बन्दों को लागों के ढेर पर हमेंगा के लिए
 सोया पड़ा है । उसकी तलवार टूट गई है । मगर
 उसकी मूँठ उमारी मुट्टी में घब भी रुम कर जाड़ी
 हुई है ।

बादशाह— इतना घब यहाँ से कितनी दूर है ?

दिलेरसा— हुजूर, तीन दिन की मजिन घोर है ।

बादशाह— मगर शाही की ताकत तो रुम है ।

दिलेरखाँ—कल तक वहाँ पहुँचना नामुमकिन है। फौज यकी हुई, सुस्त और धर्बाद है। उसको तरतीब नहीं दी जा सकती। फिर, दुश्मन हार्साकि पायभाल हो चुके हैं—फिर भी उनका खतरा बना हुआ है।

बादशाह—जो कुछ भी हो—मगर इस मूर्खो जगह से फौरन लडकर कूँच करना चाहिए और रूपनगर हमारे पहुँचने की खबर भिजवा देना चाहिए।

दिलेरखाँ—जो हुबम ! मगर मुझे कुछ दास में काला नजर आता है।

बादशाह—यानी ?

दिलेरखाँ—मेवाड़ को फौज का शाही सवारी को रास्ते में घटकाना किसी रास मकसद से ही हो सकता है।

बादशाह—तुम क्या कहना चाहते हो ?

दिलेरखाँ—यही, कि रूपनगर के राजा ने दगा की है। उसने इधर हमें बुलाया है—उधर खाना को हमारी घात में लगा दिया।

बादशाह—(गुम से बेचन होकर) अगर ऐसा हुआ तो मैं रूपनगर और उदयपुर दोनों ही को खत्म कर दूँगा।

दिलेरखाँ—बहतुर, तो भय जहाँपनाह धाराम करें।

बादशाह—मुखह ही लडकर का कूँच होगा।

दिलेरखाँ—जो दूबम।

[जाज है]

[पदा बदलता है]

चौथा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : महाराजा और उनके दो-चार सान-सान सरदार राजमहल के एक पार्श्व में खड़े हैं।]

एक सरदार—धन्नदाता को रूपनगर से रजकुमल लौट आने की बधाई !

राजा— परन्तु मरदारो, जब तक मैं रावत रत्नसिंह के समाचार न जान लूँ—मेरा उद्वेग शान्त नहीं हो सकता। अभी तक युद्ध के कुछ भी समाचार नहीं मिले। (चीर कर) वह लौट आ रहा है।

[एक बाड़ा लोह-मुहान आता है]

बोडा— (राजा के आगे घुटनों के बल गिरकर) धन्नदाता की जय हो—मैं युद्ध क्षेत्र से आ रहा हूँ।

राजा— कहां बौर, युद्ध-क्षेत्र के समाचार कहो ?

बोडा— महाराज, वहाँ ऐसा घमासान युद्ध हुआ कि रक्त का नदियां बह गईं। जैसे वर्षा ऋतु में बादल उमड़-उमड़ कर, गरज-गरज कर चौपारी वर्षा करते हैं, उन्ही भाँति राजपूतों ने शत्रुओं को चारों ओर से काट डाला।

राजा— तो युद्ध में हमारी जय हुई ?

बोडा— धन्नदाता, प्रथम दिनमें क्या कहना है। श्रीमान् रजकुमारों को हराने कर लौट आए। पाण्डित्य प्राप्तनगर को यह बुँह को नानी पड़ी कि जिसे

वह चिरकाल तक याद रहेगा ।

राणा— क्या विजयी वीर रत्नसिंह पोछे आ रहा है ।

मोडा— हाँ महाराज, विजयी वीर, राजपूत धर्म का पालन कर ऐसी गानवान से आ रहा है, जैसी गानवान से आज तक कोई योद्धा मेवाड़ में न आया होगा ।

राणा— तुम क्या कहना चाहते हो ?

योद्धा— धरणी खम्मा धन्नदाता । वह वीर आ रहा है, वह वीर शिरोमणि । तलवार का धनी ।

राणा— सरदारो, विजयी वीर का स्वागत किया जाय । किले पर, महल में, नगर में, सर्वत्र रौशनो होनी चाहिए । मैं डंका और धौसा, छत्र और चँवर उसे परम्परा के लिए प्रदान करता हूँ ।

योद्धा— डंका और धौसा बजने दीजिए महाराज । सर्वत्र रौशनो भी होने दीजिए । जिनसे सब कोई उद्योग देंगे, उससे उस महान् उत्सर्ग को—उसके बलिदान को ।

राणा— ठाकुर ! तुम क्या कह रहे हो ?

योद्धा— (धीमे से धीमे भरकर) धन्नदाता, सत्य ही कह रहा है ।

राणा— तुम्हारे बातें सदिग्ध हैं । रावठ रत्नसिंह जीवित है न ?

योद्धा— महाराज, वे जीवन को जय कर चुके ।

राणा— (ठन्दी गाने नेकर) तो यों कहें वीरवर रत्नसिंह

घब नहीं हैं ।

योद्धा— धन्नदाता को जय हो ! रावत रत्ननिह घमर हुए, उन्होंने शत्रु से ऐसा लोहा लिया कि जिसका नाम यास्तव में लोहा लेना है । महाराज, हम उनके मृत शरीर को ले आए हैं ।

राणा— रत्नगर्भा धनुषधरा का एक लाल घपने उठते हुए जीवन में ही समाप्त हो गया । घमं घोर कर्तव्य की बेदी पर यतिदान होने का यह घद्भुत उदाहरण रहा । (घाँसों में घानू भरकर) परन्तु, इस घोर को मैं कुछ भी पुरस्कार न दे सका ।

राठौर जोधासिंह—महाराज, घोर का पुरस्कार तो उगकी यश-दिवनी मृत्यु ही है । जो क्षत्रिय घपने कर्तव्य का पालन करना हुआ जीवन उत्सर्ग करें, उसकी होड़ कोन कर सकता है ? महाराज, यह शरीर नदर है घोर जीवन नगण्य । कर्तव्य घोर यतिदान ही उसके मूल्य की वृद्धि करता है । रावत रत्ननिह का जीवन धनूत्य रहा, हम लोग उन पर शह करते हैं, महाराज !

भाना गुनठाननिह—किमी रुचि ने कहा है—

कुण्डल जतन घन रो करे, कायर जीव जतन ।

मूर जतन उन रो करे, तिनगे गायो धन्न ॥

राणा— धन्य है, यह मूर ! (जोड़ा ब) नहीं, उन घोरपर की

वीर-गाथा विस्तार से कहो ।

योद्धा— महाराज, कहीं तक उस वीर-गाथा को बयान करूँ । किसान जैसे दर्रात से खेत काटता है, उसी प्रकार चूड़ावत वीर ने शत्रु सेना को काट डाला । उनका शरीर शत्रुओं की लोथों के ढेर में मिला ।

राणा— त्यागभूति चूड़ाजी का पराना मेवाड़ में त्याग और तप का धादस कायम कर चुका है । कहो, वीर कितने योद्धा युद्ध भूमि से बचे हैं ।

योद्धा— कुछ उँगलियों पर गिनने योग्य । परन्तु चिन्ता नहीं महाराज ! शरणागत की रक्षा हो गई और मेवाड़ की सज रह गई ।

राणा— यह देश और जाति धन्य है जहाँ हाड़ी रानी जैसी बालिकाएँ और रत्नसिंह जैसे वीर बालक जन्म लें । जिनके जीवनउत्सर्ग और धादस के नमूने हों । जाओ वीर, तुम धाराम करो । मैं इस योद्धा का और उसकी विजयिनी सेना का यद् स्वागत करूँगा कि जिसका नाम । सरदारो जाओ, वीर-भूजा की संवारी करें ।

सरदार गण—नलिए धन्नदात ! (अब जाते हैं) चारण विरद माता है—

वेह विरद रजपूत प्रथम मुग नूँठ न बोले ।

वेह विरद रजपूत पर-त्रिय काछ न सोने ।

येह विरद रजपूत भाय ,वांटे कर जोरें ।
 येह विरद रजपूत एक लासां विच घोरें ।
 जम राण पाये पाछा घरे देखि मतो अचपूतरो ।
 करतार हाय दोधी करद येह विरद रजपूतरो ।

[पदां गिरता है]

पाँचवाँ दृश्य

[स्थान—उदनपुर का राजमहल : कुंजर राजसिंह की रानी कमल-
 कुमारी घरने तपन कथा में । समय—रात्रि : कोई नैराश्य में
 गा रहा है । रानी ध्यान में मुन रही है ।]

भिनमिलताती रात घाई ।

गोकु की भाभा मुनदूरी छा रही थी दिव्य नभ में ।
 भानु तपकर मस्त होने जा रहा था श्रान्त पथ में ।
 कालिमा की कोर वायत जो हुई क्या बात घाई ।

भिनमिलताती रात घाई ।

ध्योम व्याकर में उजागर दिव्य तारे भर रहे हैं ।
 कालिमा के मात पर क्या हास्य भा ये कर रहे हैं ।
 यशोनि ने भानो तमिश्था भेदने की पात घाई ।

भिनमिलताती रात घाई ।

तीन पक्षी फिर सिंह का गीत गाता है नहीं वे ?
 प्राण का रुदन गुनागा कौन पाता है नहीं वे ?

राग छलकाती हुई विश्रान्ति की तह रात आई ।

झिलमिलाती रात आई ।

रानी— (आकाश की ओर देखकर) अनन्त आकाश में ये उज्ज्वल नक्षत्र कैसे भले मालूम देते हैं । न-जाने ये कितनी दूर से इस ग्रन्थकार में आलोक बिखेर रहे हैं । ओर इस आलोक बिखरने की यह कथा कितनी पुरानी, कितनी प्रभावशाली है । कितने कवियों के कवित्वमय हृदयों ने इसे देखा है । कितनी विरहिणी नारियों की आत्मा का व्याकुल भाव इन्होंने देखा है । यह भूक ज्योतिर्मण्डल जगत् में एक सौन्दर्य का विस्तार करता है । इनसे रात कितनी सुन्दर बन गई है । परन्तु यही क्या इनका अस्तित्व है ! नहीं । अति दूर अपने ध्रुव पर ये सब महान् हैं । उसी महानता की प्रतीक्षा इनका यह झिलमिल प्रकाश है ।

[कुमार जयसिंह घाने हैं]

जयसिंह— याह, यह पुपचाप तुम्हारा रात्रि निरीक्षण हो रहा है ।

कमलकुमारी—हाँ स्वामी, आज यभी से घाप घवकादा पा गए ?

जयसिंह— हाँ प्रिये ! इन प्राणों को तो तुमने घट्ट नेह के तारों से बांध रखा है, कहीं भी हों खिचकर यहीं चले घाने हैं । अब राणात्री के लौट घाने पर मुझे

घनकाण भी मिस गया है। पर तुम क्या सोच रही हो प्रिये !

कमलकुमारी—कुछ नहीं। कोई गा रहा था कि यह भिल्ल-मिलातो रात विश्राम का सन्देश लाई है, मे सोच रही थी.....जाने थो—यह कुछ नहीं।

जयसिंह—कहा प्रिये, क्या सोच रही थीं ?

कमलकुमारी—सोच रही थी—घनकार सदैव ही विश्राम का सन्देश लाता है, साथ ही विभोपिकाएँ भी। साथ सोम ही रात के घनकार में विश्राम कर रहे हैं। यही जानकर लोगों को योगी की घात मिसली है।

जयसिंह—दम में तुम क्या सोच रही हो, प्रिये ?

कमलकुमारी—यही तो स्वामी ! क्या जीवन में कभी कोई विश्राम भी कर पाता है ? हाँ, जीवन के घन की घात तो दूर ही है।

विश्राम भी कर पाता है ? हाँ, जीवन के घन की घात तो दूर ही है।

जयसिंह—जीवन के घन की घात ?

कमलकुमारी—हां है। राजसिंह और गीभाग्यकुन्दरी का ही उदाहरण लो। घन के कहीं न वही फिर-विश्राम कर रहे होंगे। वे कठिन वतंध्य तो पूरा कर चुके।

जयसिंह—वह नहीं करना, पर घनो तो खलो, दम विश्राम करें।

कमलकुमारी—बिना ही वतंध्य पूरा किए ? जीवन के गिर पर वतंध्य का भार सादे धीन मार्ग में विश्राम करें ?

राग छलकाती हुई विश्रान्ति की तह रात आई ।
भिलमिलाती रात आई ।

रानी— (आकाश की ओर देखकर) अनन्त आकाश में ये उज्ज्वल नक्षत्र कैसे भले मालूम देते हैं । न-जाने ये कितनी दूर से इस अन्धकार में आलोक बिखेर रहे हैं । ओर इस आलोक बिखेरने की वह कथा कितनी पुरानी, कितनी प्रभावशाली है । कितने कवियों के कवित्वमय हृदयों ने इसे देखा है । कितनी विरहिणी नारियों को आत्मा का व्याकुल भाव इन्होंने देखा है । यह मूक ज्योतिर्मण्डल जगत् में एक सौन्दर्य का विस्तार करता है । इनसे रात कितनी सुन्दर बन गई है । परन्तु यही क्या इनका अस्तित्व है ! नहीं । अति दूर अपने ध्रुव पर ये सब महान् हैं । उसी महानता की प्रतीक्षा इनका यह भिलमिल प्रकाश है ।

[कुमार जयगिह भाते हैं]

जयसिंह— बाह, यह गुपचाप तुम्हारा रात्रि निरीक्षण हो रहा है ।

कमलकुमारी— हाँ स्वामी, आज अभी से आप अचकाश पा गए ?

जयगिह— हाँ प्रिये ! इन प्राणों को तो तुमने अटूट नेह के तारों से बांध रखा है, कहीं भी हों लिचकर यहीं चले पाते हैं । अब रागात्री के लोट घाने पर मुझे

धनकाग भी मिल गया है। पर तुम क्या सोच रही हो प्रिये !

कमलकुमारी—कुछ नहीं। कोई गा रहा था कि यह मिल-मिलता तो रात विधाम का सन्देश लाई है, मैं सोच रही थी.....जाने दो—यह कुछ नहीं।

जयसिंह—कहां प्रिये, क्या सोच रही थीं ?

कमलकुमारी—सोच रही थी—घन्यकार सदैव ही विधाम का सन्देश लाता है, साथ ही विभोपिकाएँ भी। सब लोग ही रात के घन्यकार में विधाम कर रहे हैं। यही जानकर चोरों को चोरी की घात मिलती है।

जयसिंह—इसमें तुम क्या सोच रही हो, प्रिये ?

कमलकुमारी—यही तो स्वामी ! क्या जीवन में कभी कोई विधाम भी कर पाता है ? हाँ, जीवन के घन्त की घात तो दूसरी है।

जयसिंह—जीवन के घन्त की कंसे ?

कमलकुमारी—कंसे बहूँ। रत्नसिंह और सौभाग्यनुन्दरी का ही उदाहरण लो। धन वे कहीं न कहीं चिर-विधाम कर गे होंगे। वे कठिन कर्तव्य तो पूरा कर चुके।

जयसिंह—रह नहीं सकता, पर घन्ती तो चली, हम विधाम करें।

कमलकुमारी—बिना ही कर्तव्य पूरा किए ? जीवन के निर पर कर्तव्य का भार लादे बीच मार्ग में विधाम कंसे ?

उनको स्मरण करते हुए नीचे लिखी बातों पर आपका ध्यान दिलाता हूँ जिनमें आपकी और प्रजा की भलाई है। मैंने यह सुना है कि मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध कार्यवाही करने की जो तदवीर हो रही है, उसमें आपका बहुत खर्चा खर्च हो गया है और इस काम में खजाना खाली हो जाने के कारण उसकी पूर्ति के लिए आपने जजिया कर लगाने की आज्ञा दी है।

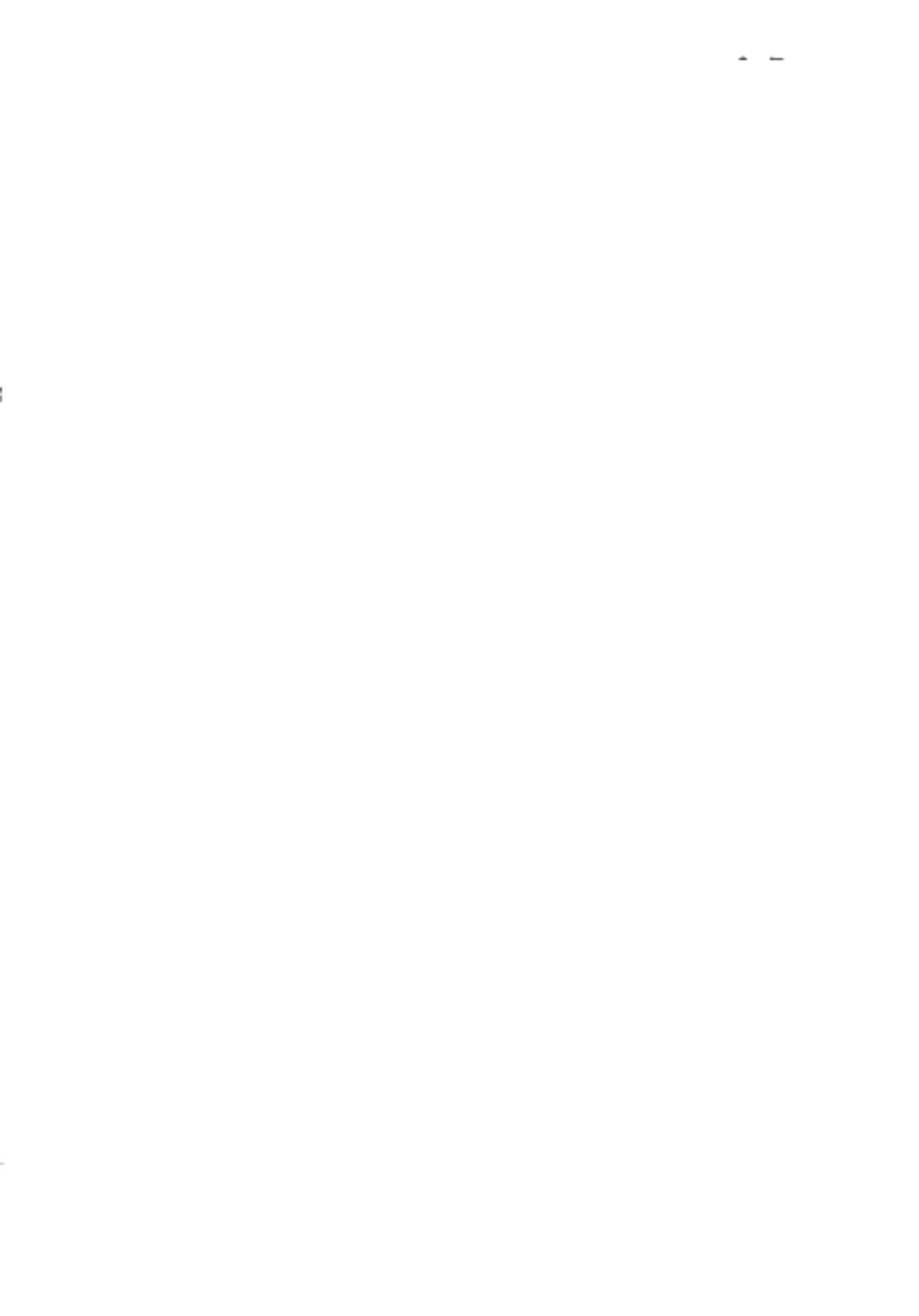
सब दरबारी—शिव, शिव ! धिक्कार है, इस प्रवृत्ति को।

राणा— आप लोग शान्ति से गुनिए।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'आप जानते हैं कि आपके पूर्वज स्वर्गीय मुहम्मद जलानुद्दीन अकबर शाह ने ५२ साल तक न्यायपूर्वक शासन कर प्रत्येक जाति को आराम और मुक्त पट्टवाया। चाहे वे ईसाई, दाऊदी, मुसलमान, ब्राह्मण और नास्तिक हों, सब पर उनको समान कृपा रही। इसी से लोगों ने उन्हें जगद्गुरु की पदवी दी थी।

एक सरदार—गुण ही जगत में पूजे जाते हैं।

दीवान— (पढ़ते हुए) फिर स्वर्गीय नूजुद्दीन जहांगीर ने भी २२ वर्ष तक प्रजा की रक्षा कर अपने आश्रित राजसूयों को प्रमन्न रखा—इसी तरह मुप्रसिद्ध शाहजहाँ ने भी ३२ वर्ष तक दया और ने ही



उनको स्मरण करते हुए नीचे लिखी बातों पर आपका ध्यान दिलाता हूँ जिनमें आपकी श्रीर प्रजा की भलाई है। मैंने यह सुना है कि मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध कार्यवाही करने की जो तदवीर हो रही है, उसमें आपका बहुत रुपया खर्च हो गया है और इस काम में खजाना खाली हो जाने के कारण उसकी पूर्ति के लिए आपने जजिया कर लगाने की आज्ञा दी है।

सब दरबारी—सिय, सिय ! धिक्कार है, इस प्रवृत्ति को।

राणा— आप लोग धाम्नि से मुनिए।

दीवान— (पढ़ते हुए) 'आप जानते हैं कि आपके पूर्वज स्वर्गीय मुहम्मद जलानुद्दीन अकबर शाह ने ५२ साल तक न्यायपूर्वक शासन कर प्रत्येक जाति को धाराम और मुक्त पहुँचाया। चाहे वे ईसाई, दाऊदी, मुसलमान, ब्राह्मण और नास्तिक हों, सब पर उनकी समान कृपा रही। इसी से लोगों ने उन्हें जगद्गुरु की पदवी दी थी।

एक सरदार—गुरु ही जगत में पूजे जाते हैं।

दीवान— (पढ़ते हुए) फिर स्वर्गीय नूरुद्दीन जहांगीर ने भी २२ वर्ष तक प्रजा की रक्षा कर अपने धार्मिक राजपथ को प्रमन्न रखा—इसी तरह मुप्रसिद्ध शाहादजस्त शाहजहाँ ने भी ३२ वर्ष तक दया और नेकी

में राज्य कर बना पाना ।

नव मरदार—नूब निगा !

दोदान— (पड़ते हुए) 'आपके पूर्वजों के ये मलाई के काम थे । इन ऊला और उदार निदानों पर चलते हुए थे विषय पर उदाते थे, उधर विजय और सम्पत्ति उनका साथ देता था । उन्होंने बहुत से देश और भिन्न जातों । अब आपके समय में बहुत से प्रदेश आपकी आपातता में निकल गए हैं और अब आपके मत्वाचार होने से और भी बहुत से इलाके आपके हाथ में निकल जायेंगे । मारकी प्रजा पौरों के नीचे कुबली जा रही है और साम्राज्य में कगानी घटती जाती है । आबादी घट रही है, आपत्तियाँ बढ़ रही हैं । अब मरौबी बादशाह के घर तक पहुँच गईं तो प्रजा की बात हो क्या है ! सेना मनगुष्ट है, व्यापारों पराधिन है । मुसलमान नागरिक हैं, हिन्दू दुःखी हैं । बहुत से लोग नूगे और निराश्रित रात-दिन निराश्रित और रोने हैं ।

नव मरदार—रुब-पुब ऐसा ही है, मदागत्र ! धाननगौर के राज्य में तवाही-रौ-बवाही है, मिनी की जानमान व

दोदान— (पड़ते हुए) ऐसी कलम प्रजा में या बादशाह भागी कर देने में लच्छि लगा है, उनका बहुरान बने

स्थिर रह सकता है ? पूर्व से पश्चिम तक यह कहा जा रहा है कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं के धार्मिक पुरुषों से द्वेष रखने के कारण ब्राह्मण से लेकर जोगी, वैरागी और संन्यासियों तक से अजिया लेना चाहता है। वह अपने तमूर-वंश की प्रतिष्ठा का विचार न कर एकान्तवासियों और गरीब साधुओं पर जोर दिखाना चाहता है। वे धार्मिक ग्रन्थ जिन पर आपका विश्वास है, आपको यही बतलाएंगे कि परमात्मा मनुष्य मात्र का ईश्वर है, न केवल मुसलमानों का। उसकी दृष्टि में भूतिपूजक और मुसलमान बराबर हैं। रंग का अन्तर उसकी भाषा से ही है। वही सबको पंदा करने वाला है। आपकी मस्जिदों में उसी का नाम लेकर लोग नमाज पढ़ते हैं और मन्दिरों में जहाँ भूति के भागे घण्टे बजते हैं, उसी की प्रार्थना की जाती है। इसलिए किसी धर्म की उठा देना, ईश्वर की दृष्टि का विरोध करना है।

पुरोहित गरीबदाम—निश्चय ही ऐसा है।

दीवान— (गहने हुए) 'मनलब यह है कि आपने जो कर हिन्दुओं पर लगाया है वह न्याय और मुनीनि के विरुद्ध है, क्योंकि हमने देश द्रष्टि हो जाएगा। हमने सिया यह हिन्दुस्तान के कानून के खिलाफ नहीं बात है। यदि आपको अपने ही धर्म के आधार ने इस पर



स्थिर रह सकता है ? पूर्व से पश्चिम तक यह कहा जा रहा है कि हिन्दुस्तान का बादशाह हिन्दुओं के धार्मिक पुरुषों से ट्रेप रखने के कारण ब्राह्मण से लेकर जोगी, बैरागी और संन्यासियों तक से जजिया लेना चाहता है। वह अपने तैमूर-वंश की प्रतिष्ठा का पिचार न कर एकान्तवासियों और गरीब साधुओं पर जोर दिखाना चाहता है। ये धार्मिक ग्रन्थ जिन पर आपका विश्वास है, आपको यही बतलाएंगे कि परमात्मा मनुष्य मात्र का ईश्वर है, न केवल मुसलमानों का। उसकी दृष्टि में मूर्तिपूजक और मुसलमान बराबर हैं। रंग का अन्तर उसकी पाशा से ही है। वही सबको भेदा करने वाला है। आपकी मस्जिदों में उसी का नाम लेकर लोग नमाज पढ़ते हैं और मन्दिरों में जहाँ मूर्ति के आगे घण्टे बजते हैं, उसी की प्रार्थना की जाती है। इसलिए किसी धर्म को उठा देना, ईश्वर की इच्छा का विरोध करना है।

पुरोहित गरीबदाम—निश्चय ही ऐसा है।

दीवान— (गढ़ने हुए) 'मतलब यह है कि आपने जो कर हिन्दुओं पर लगाया है वह ग्याम और मुनोनि के विरुद्ध है, क्योंकि इनसे देन दरिद्र हो जाएगा। इसके सिवा वह हिन्दुस्तान के कानून के खिलाफ नई बात है। यदि आपको अपने ही धर्म के आग्रह ने इस पर

उतारू किया है तो सबसे पहले रामसिंह से जो हिन्दुओं का मुखिया है, जजिया वसूल करें। उसके बाद मुझ श्रुमचिन्तक से। चींटियों और मक्खियों को पोसना वीर और उदारचित्त आदमी के लिए अनुचित है। आश्चर्य है कि आपको यह सलाह देते हुए, आपके मन्त्रियों ने न्याय और प्रतिष्ठा का कुछ भी विचार नहीं किया।'

सब सरदार—बहुत उत्तम ! बहुत उत्तम !

राणा— यह वह पत्र है जिसे मैं बादशाह को भेजना चाहता हूँ। अब आप लोग विचार कर बताएँ कि हमें क्या करना चाहिए—क्योंकि यह पत्र बादशाह की क्रोधाग्नि में घृत का काम देगा।

सब सरदार—महाराज, वह तो एक दिन हमें भेलना ही है, बादशाह मेवाड़ को नष्ट करने के लिए तुला बँठा ही है—फिर कल न सही आज ही सही। हमारी तलवारों ने मोर्चा नहीं खाया है। पत्र भेजा जाय।

राणा— तां सबकी यही राय है ?

सब सरदार—सबकी यही राय है।

राणा— तब यह पत्र ही रण-निमन्त्रण को पूर्णहृति हो। दोबानजी, पत्र दिल्ली व्यवस्था के साथ भेज दिया जाय। साथ में दो तलवार—एक नंगी और दूसरी म्यान सहित।

दोवान— जो याज्ञा, दरवार !

[पर्दा गिरता है]

सातवाँ दृश्य

[स्वान—दिल्ली के शाही महल के भीतर का नजर बाग : उदयपुरी बेगम अकेली टहल रही है। समय—सायंकाल।]

उदयपुरी बेगम—(स्वगत) बेंत खाकर जैसे कुत्ता दुम दबाकर भागता है, उसी तरह भाग भाए ! कहते हैं, ये हैं शाहन्शाहे मालम, शाहनशाही की सारी दान धूल में मिल गईं। मैंने कहा था, उस बाँदी से चिलम भरवाऊँगी। मगर कहीं ? बादशाह की नाक की लतों से तोड़नेवाली यह मगरूर पाजी गेंवारी काफिर लड़की शाहनशाहे हिन्द को घरका देकर साफ निकल गईं। सारी शाहन्शाही दान धूल में मिल गईं। (देखकर) वह बादशाह सलामत घा रहे हैं। (हँसकर) बन्दगी जहाँपनाह, फर्माइए वह बाँदी कहीं है ? मुझे दूरका भरवाने की बड़ी दिक्कत हो रही है।

बादशाह— दूतभीनान रखो बेगम, बहुत जल्द वह बाँदी तुम्हारे दृज़ूर में हाज़िर कर दी जाएगी। उसके बाद जो चाहे जितनी चिलम भरवाया करना।

उदयपुरी बेगम—बल्लाह, जहाँपनाह तो इस तरह फर्मा रहे हैं,

गोया सबकुछ हुजूर की ताकत ही में है।
 बादशाह— मैं आलमगोर हूँ और मेरी ताकत का अन्दाजा
 लगाना औरतों का काम नहीं।

उदयपुरी बेगम—बजा है, एक अदना औरत कैसे शहंशाहे
 आलम की ताकत का अन्दाजा लगा सकती है।
 शायद हुजूर की ताकत का अन्दाजा न लगा सकने
 पर ही उस काफिर गँवारिन लड़की ने हुजूर की
 नाक लातों से तोड़ी थी।

बादशाह— (गुस्से से) जमोन-औ-आसमान पर जहाँ वह होगी,
 लाकर यहाँ हाजिर की जायगी और शहंशाह के
 साथ की गई गुस्ताखी की सजा पायगी।

उदयपुरी बेगम—सच है, फ़िलहाल तो हुजूर शायद मस्लहत
 से उससे शादी न कर बीच रास्ते ही से लौट आए।

बादशाह— मुझसे दगा की गई।

उदयपुरी बेगम—उम्मीद न थी कि वह गँवारिन ऐसी चालाक
 निकलेगी कि बादशाह आलमगोर को भी चरका
 दे जायगी।

बादशाह— मगर आलमगोर के गुस्से को बढ़ाना आग से खेलना
 है।

उदयपुरी बेगम—(हँसकर) मुना है, इन राजपूत लड़कियों को
 आग से खेलने की खास कुदरत होती है। हाँ, तो
 क्या, यह सच है कि उस लड़की ने उदयपुर के

राणा से शादी कर ली ।

बादशाह—सुना तो है ।

उदयपुरी बेगम—और उसी साइत में, जिसमें हुजूर उससे शादी करने वाले थे ।

बादशाह—उसी साइत में ।

उदयपुरी बेगम—जहाँपनाह लाचार लौट आए । क्या इमा बूते पर हुजूर हिन्द पर हुकूमत करेंगे ? भाइयों को कत्ल करके और घाप को कंद करके जो तस्त भापन गुनाहों की दलदल में फँसकर हासिल किया है, उसकी जड़ एक नाचीज गँवारी हिन्दू लड़की यों हिला डालेगी, मैंने यह नहीं सोचा था ।

बादशाह—भालमगोर बदला लेगा । तुम देर लेना, यह सरकरा बदवस्त उदयपुर का राणा भालमगोर के कदमों पर नाक रगड़ेगा । मैं मेवाड़ को जलाकर तारु कर दूँगा, एक भी गाँव, एक भी घर, एक भी इंसान जिन्दा न बचने पाएगा । मैं घोरत, वरुचाँ घोर बूतों पर भी रहम न करूँगा । तमाम राजपूताने की ईंट-से-ईंट बजा दूँगा ।

उदयपुरी बेगम—शायद घाप यह कर सकेंगे । घोर यह मगरूर वारी ?

बादशाह—यह जरूर रगमहल में पाकर तुम्हारी चिलम भरेगी ।

[बेनी में जाता है]

[पदों गिरा है]

घाठवाँ दृश्य

[स्थान—उदयपुर का जनाना महल : महाराणा राजसिंह पीर चारुमती : समय—प्रातःकाल ।]

राणा— अब तुम्हारी क्या इच्छा है, राजकुमारी ! बादशाह से तो तुम्हारी रक्षा हो गई ।

चारुमती— (सजाकर) महाराज, जिस क्षत्रिय-कन्या को आपने हरण किया है, उसकी इच्छा क्या है ? जिसके लिए क्षत्रिय वीर क्षत्रिय-कन्या को हरण करते हैं—वही आपने किया ।

राणा— हमने अपनी इच्छा से तो तुम्हारा हरण किया नहीं । तुम्हारा पत्र पाकर शरणागत की रक्षा का कर्तव्य पालन किया है ।

चारुमती— महाराज, हरण की हुई कन्या की अन्यत्र गतिविधि कहाँ है ?

राणा— क्यों ? अब तुम रूपनगर जा सकती हो, विक्रमसिंह मन्चे क्षत्रिय हैं, वे तुम्हें सुघो से रखेंगे । फिर जहाँ तुम्हारी इच्छा होगी या उन्हें उचित प्रतीत होगा, तुम्हारा व्याह कर देंगे ।

चारुमती— (घाँटू भरके) महाराज, विपत्ति ने मेरी लाज-धर्म तो धो वहाई । अपना धर्म जैसे आप समझते हैं, उसी तरह अपना धर्म मैं भी समझती हूँ । मैंने जब

अपने को आपके अपराध कर दिया और वहाँ ने आपकी गाँठ बाँध दी तो यह तन-मन आपका दुआ और अब क्या कहूँ ।

राणा— परन्तु कुमारी, वह सब बातें तो विवश होकर की गई थीं । बादशाह से बचने की दूसरी राह नहीं थी । मेरा धर्म-धर्म और राजधर्म दोनों ही यह कहते हैं कि दरखास्त से अनुचित लाभ न उठाया जाय ।

चारुमती— तो महाराज क्या कहना चाहते हैं ?

राणा— यही कि अब तुम रूपनगर जाओ और जैसा तुम्हारे गुरुजनों का आदेश हो, वह करो ।

चारुमती— जैसी आपकी आज्ञा । प्राण मुझे रूपनगर भेजेंगे तो मैं वहीं चली जाऊँगी, परन्तु वहाँ जाने पर दिल्ली के दरार से मैं बच न सकूँगी । रूपनगर की शक्ति मेरी रक्षा न कर सकेगी, मुझे फिर महाराज की दरार में ही पड़ेगी । परन्तु, अब मैं आपको व्यर्थ कष्ट न दूँगी, दिल्ली चली जाऊँगी ।

राणा— दिल्ली क्या रगमहल में जाओगी ? मेरा ही विचार था, तो पहिले ही क्यों नहीं गई थीं ।

चारुमती— पहिले गोवा था कि.....सौर, ज्ञान दीर्घम् ।

राणा— कुमारी, यदि बादशाह की बेगम बनने का तुम्हारा इरादा ही गया है, तो मैं उसमें विघ्न न दानूँगा ।

चारुमती— राजपूत-वाला के इरादे में विघ्न करने वाला वीर पृथ्वी पर कौन है। मैंने आपसे कहा था न कि मुझे एक और शक्तिशाली आसरा मिल गया है। इस बार मैं आपसे अधिक शक्तिशाली की शरण जाऊँगी।

राणा— वह शक्तिशाली कौन है ?

चारुमती— यह विप। अन्त में राजपूत की बेटियों की यहो तो गति होती है।

राणा— क्या अब विपपान करोगी, कुमारी ?

चारुमती— और उपाय क्या है ? आशा है, विप शरणागत को आपको भाँति पीछे निराश्रय न करेगा।

राणा— मैं निराश्रय तो नहीं करता, कुमारी !

चारुमती— तब फिर रूपनगर में मेरा रक्षक कौन है ?

राणा— तो फिर तुम यहीं रहो।

चारुमती— मेहमान बनकर या दासी बनकर।

राणा— (हँसकर) कुमारी, तुमसे जोतना कठिन है। मैं तुम्हारी वाचालता देखता था। अच्छा, तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो—जो चाहती हो वही बनकर।

चारुमती— (राणा के चरण छूकर) महाराज, आज ही से नहीं, जिस दिन मैंने आपकी तस्वीर देखी, उसी दिन से आपको चरणदासी बन गई थी। आप सोचते होंगे, मेरे लिए वादनाह से रात ठनेगी। सो तो जो होना

था, हो चुका । महाराज का तेज-प्रताप बहुत बड़ा है ।
उससे टकरा कर मुगलों का दर्प धूँस हो जायगा ।

राणा— मुगलों का मुझे कुछ भी भय नहीं है, कुमारी ! तुम
जैसी चतुर, रम-गुणवती जिस राजा की भार्या
हो—वह धन्य है । धामो, आज मैं मन-वचन से
तुम्हें अपना राजमहिषि बनाता हूँ ।

चारुमती— (धामू भरकर) महाराज ! मैंने प्रतिज्ञा की थी कि
आप यदि मुझे ग्रहण न करेंगे तो मैं राजसमुद्र में
दूब मरूँगी ।

राणा— प्रिये ! भव मेरे मन की सच्ची बातें सुनो । तुमने
केवल विपत्ति में फँसकर मेरी महिषी बनना चाहा
था, इसी से हमने इतनी बातें कही । पर एक बात
विचार कर हम यह उचित समझते हैं कि रूपनगर
गयर भेजकर तुम्हारे गुरुजनों को बुलाकर उनके
हाथ से तुम्हारा ग्रहण विधियत् करें—यही हमारी
इच्छा है । इसमें शीघ्रता भी है और धर्म भी ।

चारुमती— आपका प्रस्ताव ठीक है । मैं भी उनका आशीर्वाद
लेकर ही आपकी चरणदासी बनना चाहती हूँ ।

[१३वाँ अङ्क का ३]

नवां दृश्य

[स्वान—उदयपुर का राजभवन : दुर्गादाम और राणा राजसिंह परस्पर बातचीत कर रहे हैं। समय—मायंकाल।

दुर्गादास— महाराज ! अब हमें कुछ न कुछ कर डालना चाहिए। यदि हम युक्ति से काम न लेंगे तो निकट भविष्य में जो हम पर भावी विपत्ति आ रही है, उससे

हमारो रक्षा होना किसी भी भाँति सम्भव नहीं है।

राणा— दुर्गादास, आपकी बातें विचार के योग्य हैं और आपकी युक्ति भी महत्वपूर्ण है। मैं स्वीकार करता हूँ कि हम अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर भी मुगल-साम्राज्य को नहीं उलट सकते।

दुर्गादास— इसी से महाराज, मैंने यह जाल रचा है। साम, दाम, दण्ड, भेद—यह तो राजनीति है। पहिले हमने शाहजादे मुअज्जम से यह प्रस्ताव किया था कि वह बादशाह के विरुद्ध वगावत का झण्डा खड़ा करे और हिन्दू-शक्तियों का सम्मान करे, तो राजपूतों की सम्मिलित शक्ति की सहायता से बादशाह बना दिया जाएगा।

राणा— फिर, क्या शाहजादा इस पर राजी हुआ ?

दुर्गादास— पहिले वह राजी हो गया था। राव केसरोसिंह चौहान और सैनिक ने उससे बातचीत की थी, परन्तु

करने को जुरत की है और तत्तवार भेजकर चुनौती भी दी है।

यजीर— हुजूर, खत में तो ऐसा ही लिखा है।

बादशाह— और आप कहते हैं कि जो लड़का जसवन्तसिंह का बेटा कहकर हमारे मुपुर्द किया गया था, वह जाली था, जसवन्तसिंह का असल बेटा रानी के पास है।

यजीर— जो हाँ, हुजूर, ऐसा ही है।

बादशाह— मगर इस बात पर यकीन कैसे किया जा सकता है।

यजीर— पहिले मुझे भी यकीन न हुआ था। मगर जब मुना कि राना ने उसको परवरिश के लिए भारी जागीर दी है तो यकीन करना पड़ा।

बादशाह— और आप कहते हैं कि राना को बार-बार किसने पर भी उसने उस लड़के को यागिस देने में टाल-टूल की है।

यजीर— जो हाँ, हुजूर।

बादशाह— मकैला रूपनगर का मामला हाँ उम पर फौजकमा करने के लिए काफी था। इनके पेश्वर भी उसके गिनाफ बहुत-मो बातें मुनी गई हैं। अब मगर शत्रुपुतों की दम दबंगता को न कुचला गया तो शाही तमन का धमनो-धामान मतरें में पड़ जायगा, मारवाड और मेवाड़ भी ताचतें मिलकर एक भारी शिमाद नर्वा करेंगे। उभर दक्षिण में मराठी चूहा

उछल-कूद मचा रहा है। इसलिए अब वक्त आगया है कि फौज-कशी की जाय। वस, मैं चाहता हूँ कि जल्द से जल्द फौज की तैयारी कर ली जाय।

वजोर— हुजूर, यह बहुत ही पेचीदा मामला है। वक्त बहुत नाजुक है, चारों तरफ दुश्मनों का जोर है। ऐसी हालत में जहाँपनाह का दारुल सल्तनत का छोड़ना खतरे से खाली नहीं।

बादशाह— आलमगीर हमेशा खतरे से खेल करने का आदी है। आप अभी अकबर को फरमान भेज दीजिए कि वह अपनी तमाम फौज लेकर अजमेर को और कूच करे और जल्द से जल्द हमारे वहाँ पहुँचने की उम्मीद रखे और आप आज से तीसरे दिन हमारे कूच को तैयारी कर दें।

वजोर— जो हुक्म।

[जाता है]

पाँचवाँ अङ्क

पहिला दृश्य

[स्थान—उदयपुर : महाराणा की राजसभा : युद्ध की मन्त्रणा हो रही है, समस्त सरदार हाजिर हैं । बीच में महाराणा राजसिंह विराजमान हैं ।

राणा— भाग सरदारगण भाज एक बड़ी महत्वपूर्ण समस्या पर विचार करने एकत्र हुए हैं । इसी समस्या पर मेवाड़ के जीवन-मरण और प्रतिष्ठा का प्रश्न प्रवलम्बित है ।

कुँवर जयसिंह—मेवाड़ अपनी प्रतिष्ठा की प्राण देकर रक्षा करेगा ।

कुँवर भीमसिंह—धीरे उसके प्राण महँगे दामों में विक्रय ।

राणा— (मुस्करा कर) शान्त होओ कुँवर ! अभी सब बातें मुन लो । भाग लोग जानते हैं कि मुगल-शक्ति ने राजपूताने की चीरता को लोहा लगा दिया है । सभी राजपूत घराने अपनी जान झूटकर पंचल

शाही नौकरी बजाना ही नहीं प्रत्युत शाही हरम में अपनी पुत्रियों को बेगम बनाना भी अपने लिए शोभा की बात समझे बैठे हैं ।

रावल जसराज—पर यह उनके लिए डूब मरने की बात है ।

राणा— अकेला मेवाड़ ही ऐसा बचा है जिसने न तो बादशाह को बेटी दी और न स्वाधीनता ।

राणावत भार्वासिंह—जब तक मेवाड़ में एक भी सीसोदिया है, वह ऐसा कभी न करेगा ।

राणा— यह बात मुगल-वादशाहों को हमेशा खटकती रही है और समय-समय पर उन्होंने मेवाड़ को दलित करने में अपनी पूरी शक्तियों को आजमाया है । मेवाड़ की चौआ-चौआ जमीन वारों के रक्त से रंगी पड़ी है और मेवाड़ को कभी सुख की नींद सोना नसीब नहीं हुआ । मेवाड़ की न जाने कितनी कुलाङ्गनाएँ अपने उठते अरमान हृदय में लिए जलकर राख हो चुकी हैं । (घानू नर पाते हैं)

महाराज मनोहरसिंह—(घाबेय में) आज भी मेवाड़ में उत्सर्ग और वीरता के भाव जीवित हैं और आवश्यकता पड़ने पर मेवाड़ वंश ही जोहर दिखाएगा जैसा उसके पूर्वजों ने दिखाया है ।

राणा— मेवाड़ पर शाही नाराजों के ये पुराने कारण तो हैं ही, अब और नए कारण भी पैदा हुए हैं ।

महाराज दलसिंह—नए कारण कौन-कौन हैं, हम सुनना चाहते हैं ।

राणा— (मुस्कराकर) सुनिए, इसीलिए आप लोगों को इकट्ठा किया गया है । हमने शाही आज्ञा की बिना परवाह किए अपने खोए हुए वे परगने दखल कर लिए जिन्हें बादशाह साहजहाँ ने जख्त कर लिया था ।

महाराज धरिसिंह—वे परगने हमारे थे । बादशाह ने अन्याय से उन्हें जख्त किया था ।

राणा— प्रसिद्ध है कि आलमगीर देवमन्दिर बहामे में अपने सब पूर्ववर्ती बादशाह से धाजी ले गया है । यह बादशाह पीछे है, पहिले कट्टर धर्मान्ध मुल्ला है । जब वह गुजरात का सूबेदार था तब उसने अहमदाबाद का विन्तामणिका मन्दिर गिरवाकर उसके स्थान पर मस्जिद बनवाई थी, और भी गुजरात के कई मन्दिर बहवा दिए थे । अभी कुछ दिन पूर्व उसने रायभर के सब पुराने मन्दिरों को तोड़ डालने और पाठशासियों को बन्द कर देने का हुक्म दिया है और धर्म-मन्बन्धों पठन-प्राटन रोक दिया है । काठियावाड़ के गोमनाथ, काशी के विश्वनाथ, मथुरा के केशवराय के प्रसिद्ध मन्दिरों को विध्वंस करके वही मस्जिदें बनवा दी हैं । उसने रायभर के मन्दिरों और धर्मस्थानों को नष्ट करने को एक

महकमा कायम किया है और अब तक हजारों मन्दिर विध्वंस कर चुका है। जब उसने गोवर्धन के बल्लन-सम्प्रदाय के द्वारिकाधीश के मन्दिर पर शनिदृष्टि की तो गोस्वामियों ने मेवाड़ की शरण ली और कांकरौली में उसकी स्थापना की गई। इसी भाँति गोवर्धन स्थित श्रीनाथ की मूर्ति को जब लेकर गोस्वामी बूँदी, कोटा पुष्कर, किशनगढ़, जोधपुर गए, पर किसी ने आश्रय नहीं दिया। ग्रन्थ में, गोसाईं को मैंने वचन दिया कि मूर्ति को मेवाड़ में ले आओ। मेरे एक लाख सौसोंदियों का सिर काटने पर ही श्रीरंगजेव उसे विध्वंस कर सकता है। और वह सीहोर में स्थापित कर दी गई है।

भाला चन्द्रसेन—जय हिन्दूपति, हिन्दूसूर्य महाराणा की। महाराज का यह कार्य मेवाड़ की प्रतिष्ठा के योग्य ही हुआ है।

राणा— फिर हमने धर्म-संकट में पड़कर बादशाह की मंगतेर रूपनगर की राजकुमारी चारुमती का हरण करके उसे नाराज कर दिया, क्योंकि राजपूत-वाला ने शरण चाही थी।

रावत केसरीसिंह—यह तो क्षत्रियोचित कार्य ही हुआ है।

राणा— परन्तु सबसे अधिक नाराजी तो बादशाह के मन में मेरे उस छत से हुई है जो मैंने जजिया के विरुद्ध

उसे लिरा है और उसे चुनौती दी है कि पहिले यह मुझसे यह कर ले । यह अपमानजनक कर बादशाह अकबर ने वन्द कर दिया था । सौ वर्ष पीछे अब औरंगजेब ने इसे जारी कर सक्ती के साथ बसूल किया है, जो न्याय और नीति के विरुद्ध है । राज-पूताने में कौन था जो हिन्दुओं के इस अपमान से उन्हें बचाने की आवाज उठाता । लाचार हो, मुझे ही मुँह खोलना पड़ा ।

रायत रत्नसेन—धरणी सम्मा अन्नदाता, यह काम आप ही के योग्य था ।

राणा— सरदारो, बादशाह को नाराज करने के लिए यही कारण काफी थे, पर मैं एक और भारी अपराध कर बैठा । मारवाड़पति वीर महाराज जसवन्तसिंह को जमहँड के थाने में बादशाह ने मरवा डाला । जब उनको विधवा राना और कुँवर जोधपुर लौट रहे थे, बादशाह ने जोधपुर को घातका कर लिया और रानी तथा कुँवर को दिल्ली आने का हुकम दिया । बादशाह की नीयत खराब देख रानी कुँवर को लेकर वहाँ से भाग निकली और मेवाड़ की शरण ली । दुर्गाशक्त राठौर ने मुझसे सब दफ्तरीयत कही । मुझे मारवाड़ के नाली राजा को धाथ्य देना पड़ा । फिर बादशाह के बारम्बार लिखने पर मैंने

उन्हें न दिया ।

राव केसरीसिंह—हम मर मिटेंगे, पर शरणागत की रक्षा करेंगे ।

राणा— सरदारो, हमारे इन्हीं सब अपराधों का दण्ड देने और हमसे जजिया वसूल करने प्रतापी आलमगीर भारी सेना लेकर हम पर चढ़ाया है और अजमेर में छावनी डाली है । तथा एक बड़ी सेना के साथ शाहजादा अकबर को इधर रवाना किया है । इसलिए अब भटपट हमें अपने कर्तव्य की सोच लेना चाहिए ।

सब सरदार—कर्तव्य हमने सोच लिया है । हम युद्ध करेंगे और बादशाह के दांत खट्टे करेंगे ।

पुरोहित गरीबदास—आज्ञा पाऊँ तो निवेदन करूँ । बादशाह के पास सेना बहुत है, और साथ में फिरंगियों का तोपखाना भी है । इसलिए बराबरो का युद्ध करना ठीक नहीं है । महाराणा प्रतापसिंह और उदयसिंह ने भी ऐसा ही किया था । वे आक्रमण के समय नगर छोड़ पहाड़ों में चले गए थे । अबसर पाते ही मुगलों पर छापा मारते और शत्रुओं के दांत खट्टे करते थे । इसी से बादशाह को परास्त होना पड़ा था । महाराणा अमरसिंह ने भी यही नीति ग्रहण की थी । इसलिए आप भी यही नीति ग्रहण करें और दुर्गम अरावली की सहायता से शत्रु पर विजय

प्राप्त करें ।

राणा— राजपुरोहित का विचार बहुत उत्तम है । हमें विश्वास है कि हम शत्रु को पहाड़ी घाटियों में घेर कर भूखों मार डालेंगे । उधर हम चाही मुल्क को भी लूट कर बर्बाद करेंगे ।

भाला जसवन्तसिंह—अन्नदाता का विचार भ्रति उत्तम है ।

राणा— इस समय हमारे पास २० हजार सवार और २५ हजार पैदल हैं । इसके सिवा ५० हजार भील हमारे साथ हैं । उनके अलावा पानवाड़ा-मेरपुर, जूड़ा और जवास के भोपिए सरदार, पालों के मुत्तिया हमारे मददगार हैं । मेरी योजना है कि ५० हजार भील-वीर मेवाड़ के समस्त पहाड़ी नाकों घाटों में दस-दस हजार की टुकड़ी में छिपकर वहाँ और ज्यों ही दुश्मन की रसद, वारदाना व राजाना जाते देखें, लूट कर हमारे पास पहुँचा दें । उदयपुर और सब बस्तियों की प्रजा नगर ताली करके पहाड़ों में भगी जाय । हमारी कुल फौजों के तीन हिस्से होंगे । एक भाग कुँवर जयसिंह की अधीनता में पहाड़ की चोटों पर स्थित रहेगा । दूसरे भाग को लेकर कुँवर भीमसिंह पदिम मोर्चे पर डटेंगे और भयसूर पाते ही मानवा और गुजरात के शाही शूलकों को लूट लाएँगे । मैना का नोमरा भाग हमारे अधीन

रहेगा और हम देवरी की घाटी की चौकी देंगे ।

सब सरदार—यह योजना बहुत उत्तम है ।

राणा— अब सब सरदार अपनी-अपनी सेनाएँ सजा करके कल प्रातःकाल देवी माता के पहाड़ों में जमा हो जाएँ क्योंकि समय कम है ।

सब सरदार—जो भाज्ञा ।

[सब जाते हैं]

[पर्दा बदलता है]

दूसरा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : शाहजादा भकबर की छावनी : शाहजादा भकबर और उसके सरदार लोग : समय—सार्धकाल]

भकबर— बड़े ही ताज्जुब की बात है कि रास्ता, बाग, वन, बगीचा, सरोवर सब जगह सन्नाटा है । शहर जैसे जादू के जोर से सो गया है । कहिए हसनप्रली साहेब, क्या आपको शहर में कोई आदमी मिला ?

हसनप्रली—एक चिड़ी का पूत भी नहीं । मैंने खुद घूमकर सब तरफ देखा लिया ।

भकबर— आपका क्या ख्याल है ? भुल्क के सब वाशिन्दे क्या हुए ?

हसनप्रली—जाहिरा ऐसा मान्य होता है, हमारी फौज को

देखकर सब डरकर जंगलों में भाग गए हैं।

मकबर— तब उन पहाड़ी चूहों से जंग किस तरह किया जाएगा।

हसनमली—जंग की जरूरत ही क्या है। तमाम मुल्क, शहर, गाँव, हलके, किले हमारे हाथ में आ ही गए। मुल्क फतह हो गया। बस बँटे चैन की बशी बजाइए।

मकबर— यह भी ठीक है। मगर सोचना यह है कि क्या मुल्क फतह हो गया!

हसनमली—इसमें भी शक है। ताहजादा साहेब खुद उदयपुर में मुकीम हैं, तमाम मुल्क में हमारी फौज फैल गई है। मेरा तो ग्याल ऐसा है कि हम चारों तरफ धाने बँटाते हुए तमाम मुल्क घोर किलों की ताही दगल में करते जाएँ।

मकबर— यही किया जाय। अब प्राय १० हजार फौज लेकर उसकी बलग-बलग २ टुकड़ियाँ बनाकर हर घोर से दुश्मन की घेर से घोर मुल्क के भीतरी हिस्सों में घुसते जाएँ।

हसनमली—दुश्मन को घेरना तो नामुमकिन है। हाँ, मूने गाँव, उजाड़ भेग, मूने हुए कुम्हों घोर बर्बाद रास्तों की घेर लिया जाएगा। मगर एक मुभीयत है।

मकबर— यह क्या?

हसनमली—मगर बाहर से रमद न मिनो तो गिवाही घोर

घोड़े भूखे-प्यासे मर जाएंगे। सबसे बड़ी बात चारे और पानी की है। मुल्कभर में न एक बूँद पानी है, न एक तिनका चारा।

भकवर— पानी के लिए नए कुएँ खुदवा दिए जाय।

हसनमली—यह बहुत ही मुश्किल है। इन पहाड़ी जगहों में पहले तो बड़ी गहराई तक पानी मिलना ही मुश्किल है, फिर कहीं-कहीं तो कुएँ खुद भी नहीं सकते। दूर-दूर कोई नदी-नाला भी नहीं है। फिर चारे के लिए कोई चारा नहीं है। सिपाहियों का राशन अगर रोक दिया गया, तो बेमौत मरे।

भकवर— तब आप किस खयाल से फर्मा रहे थे कि मुल्क फतह हो चुका जंग की जरूरत नहीं।

हसनमली—मैं यहाँ कह रहा था, कि कोई नजर आए तो लड़ाई की जाए। भव लड़े तो किससे ?

भकवर— बड़ा ही पेचीदा मामला दरपेश है। मैं गौर करूँगा। अभी आप अपनी दुकड़ियों को इधर-उधर पानी और चारे की तलाश में भेजें। जो चीज जहाँ मिले ज्वल कर ली जाय। मन्दिर ढहा दिए जाएं, गाँव फूँक दिए जाय, जानघर और आदमी जो मिलें कल कर दिए जाय। एक बार इस खौफनाक मुल्क को पूरी तौर पर पामाल कर देना पड़ेगा।

हसनमली—बहुत खूब।

तीसरा दृश्य

[स्नान—भ्रमर : घानासागर की पाल : बादशाह और हजेब की छावनी : दाही सेमे में बादशाह और उसके भयोर परामर्श कर रहे हैं । समय—प्रातःकाल ।]

बादशाह— भ्रमर ने क्या पंगाम भेजा है ?

तहजुरसा—जहाँपनाह, मेवाड़ को फतह करने में बड़ी-बड़ी मुश्किलें दरपेश हैं ।

बादशाह— वे कौन-सी मुश्किलें हैं जिन्हें दाही फौज की पूरा करने में दिक्कतें आती हैं ?

तहजुरसा—सुदाचन्द, पहिली बात तो यह कि मेवाड़ के दाही धाने एक-दूसरे से बहुत दूर हैं और उनके बीच-बीच में मरावतो की पहाड़ियाँ आ गई हैं जिनके ऊपरी हिस्सों पर राणा का कब्जा है । वह वहाँ से मोठा पाते ही चीते की तरह पूरब या पश्चिम से हमारी फौज पर आ दूटता है और फौज को काट-कूट और छावनी को सूट-जाट कर फिर पहाड़ पर जा छिपता है ।

बादशाह— (भो विरोध कर) और ?

तहजुरसा—फिर मेवाड़ का पहाड़ी इलाका—उदयपुर से पश्चिम में कुम्भलगढ़ तक और राजसमुद्र से दक्षिण में सनुवर तक एक तरह से निहायत मरूत किले

के जैसा है जिसमें घुसने के लिए सिर्फ ३ नाले हैं, उदयपुर, राजसमुद्र और देसूरो ।

बादशाह— (बेचैनी से) शाही फौज की कैफियत क्या है ?

तहब्बुरखाँ—उसके सामने दिक्कत यह है कि चित्तौड़ से मारवाड़ जाने के लिए उसे बदनौर-सोजत और ब्यावर होकर लम्बा और ऊबड़-खावड़ उजाड़ रास्ता तै करना पड़ता है—जिसमें न कहीं पानी है और न चारा । तिस पर एक और आफत है ।

बादशाह— वह क्या ?

तहब्बुरखाँ—इस रास्ते के तमाम नाकों और घाटों पर ५० हजार भील तीर-कमान लिए तैनात हैं जो छिंप-कली को तरह पहाड़ पर चढ़ और उतर सकते हैं और जिनका निशाना अच्छूक होता है ।

बादशाह— शाही फौज को और क्या दिक्कतें हैं ?

तहब्बुरखाँ—जहाँपनाह, इस मुशीबत के अलावा—उसे रसद की बड़ी ही दिक्कत है । ज्यों ही मुल्क के भीतरी हिस्सों में फँसी शाही फौज को रसद भेजी जाती है—वह आनन-फानन लूट ली जाती है । मुल्क के भीतरी हिस्से की तमाम फसल बर्बाद कर दी गई है । गाँव और बस्तियाँ उजाड़ दिए गए हैं । कुएँ और तालाब पाट दिए गए हैं । मुल्कभर में न घोड़ों को चारा-पानी मिलता है, न सिपाहियों को खाना ।

बादशाह— बहुत खूब । अब हमारी तजवीज यह है कि तमाम पहाड़ी इलाके को घेर कर देसूरी, उदयपुर और राजसमुद्र के घाटों से भीतर घुसा जाय ।

तहब्बुरसा—जो इर्शाद ।

बादशाह— शाहजादा मुहम्मद अकबर को उदयपुर के मुहाने पर तैनात होने का फर्मान भेज दिया जाए और उसको मददको हसनमलोखा घुजातगाँ, और रजी-उद्दीनखाँ रहें । उनके साथ ५० हजार फौज और फिरंगियों का तोपखाना भी जाए ।

तहब्बुरसा—बहुत अच्छा जहाँपनाह !

बादशाह— और तुम देवारी के घाट का दरल कर लो । साथ ही मांडल वगैरा परगनों को भी शाही दरल में लेकर घाने बैठा दो ।

तहब्बुरसा—जहाँपनाह फी जैसो मर्जी ।

बादशाह— हम मुद्र जल्द राजसमुद्र के मोर्चों पर जाएँगे । सादुल्लाखाँ को लिख दो कि अपनी फौज के साथ यहाँ हमारा इन्तजार करे ।

तहब्बुरसा—यहून गूब, मगर जब दुस्मन मामने घाता हो नहीं तो सद्दार्द कैसे होगी ?

बादशाह— मुल्क को चारों तरफ से घेर कर मुल्क के भीतरी हिस्सों में घुसते ही चले जाओ और तमाम मेवाड़ को गानना करके, शाही घाने बैठाते चले जाओ ।

जहाँ दुश्मन नजर आए, काट डालो । आखिर वह
कहाँ पनाह लेगा ? तमाम मेवाड़ को कुचल कर
बर्बाद कर दो, कि फिर यह सिर न उठा सके ।

तहबुरखाँ—जो हुकम जहाँपनाह !

वादशाह— सुनो, तमाम सिपहसालारों को हुकम भेज दो कि
जहाँ जो मन्दिर-शिवाला नजर आए, जमींदोज कर
दिया जाय । गाँव जलाकर खाक कर डाले जाय
और औरत-मर्द जो मिले, कत्ल कर डाला जाए ।

तहबुरखाँ—जो हुकम !

[जाता है]

वादशाह— (स्वगत-हाथ मलता हुआ) इस वार मैं इन मगरूर
राजपूतों से निपट लेना चाहता हूँ । चित्तौड़ जब
तक राजपूताने की छाती पर सिर उठाए खड़ा है,
मुगलों का जजाल फीका है । जन्तनशीन अकबर
शाह से लेकर अब तक इसे कब्जा करने की तमाम
कोशिशें बेकार गईं । इस वार मैं मेवाड़ को खतम
कर दूँगा । आलमगीरी कहर से वह वच न
पाएगा ।

[पर्दा बदलता है] .

चौथा दृश्य

[स्थान—उदयपुर : शाहजादा अकबर की छावनी : समय—रात्रि]

अकबर— आप यह कहते क्या हैं, जनाव !

तहशुरग़ाँ— जो कहता हूँ, बिल्कुल सच है। आज नौ रोज से हसनमलीखाँ और उनकी फौज का पता नहीं।

अकबर— फौज को क्या साथ सूँघ गया या जमीन निगल गई !

तहशुरग़ाँ— खुदा जाने, तिस पर खुदा की मार, मालवे से मन्द्रसौर और नोमच के रास्ते १० हजार बैलों पर बजारे रसद ला रहे थे। वे सब रास्ते में भीलों ने सूट लिए।

अकबर— सूट लिए ? इसके माने यह कि हमें कल से भूखों मरना होगा !

तहशुरग़ाँ— यकीनन, क्योंकि अब रसद कतरई नहीं है। न कुषों और तालाबों में पानो है।

अकबर— (शाय अकबर) तो हम चूहेदानी में बन्द चूहों की तरह मरेंगे ? आप धनी नाके-नाके पर घाने बैठाइए और हसनमली की फौज की तलाश कीजिए।

तहशुरग़ाँ— कोई नाही अकबर धानेदारो कुबूल नहीं करता, क्योंकि दुश्मन बाब की तरह दूँकर पानों को सूट कर और माग्-काट करके न जाने कहाँ भाग जाते हैं !

अकबर— आप खुद घाटों और दरों में फौजों की टुकड़ियां भेजिए ।

तहव्वुरखाँ—बेकार ! फौज घाटियों और दरों में जाने से इन्कार करती है । उसकी हिम्मत बिल्कुल टूट गई है । एक मुसोबत और है ।

अकबर— वह क्या ?

तहव्वुरखाँ—चित्तौड़ के आस-पास के सब थाने टूट चुके हैं और राजपूतों ने पहाड़ों से निकलकर बदनौर तक अपनी फौजें फैला दी हैं, इससे अजमेर से हमारा ताल्लुक टूटने का पूरा अन्देशा है । फौज बं-सरो-सामान, थकी हुई, बे-सिलसिले, भूखी और प्यासी है !

[एक सिपाही घबराया हुआ घाटा है]

सिपाही— खुदाबन्द, दुश्मनों की फौज ने छावनी पर हमला किया है ।

अकबर— (सड़ा होकर) तहव्वुरखाँ ! आप फौरन फौज को मोर्चेबन्दी करें । मैं अभी आता हूँ ।

तहव्वुरखाँ—बहुत खूब !

[जाता है]

[पर्दा गिरता है]

पांचवाँ दृश्य

[स्थान—देवरी की घाटी : एक पहाड़ की तलहटी में शाही छावनी पड़ी है। फौजदार—नायब इश्कतानख्त और उनके दो मुसाहिव पीरवस्त और मियाँ कमरद्दीन अमल-बगल बैठे हैं। नायब साहेब मगनब पर बैठे पेचवान पी रहे हैं। एक तिवमतगार थोड़ा लिए सामने खड़ा है। नायब साहेब पेचवान पर अम्बरी तम्बाकू पी रहे हैं। दो-चार सिपाही इपर-उपर खड़े हैं। फासिले पर लड़ाई का घोर-गुल हो रहा है।]

नायब— कहो मियाँ पीरवस्त, इस वक्त अमर दुदमन यहाँ आ जाय तो तुम क्या करोगे ?

पीरवस्त— जनाव मजाल है ?

नायब— ताहम।

पीरवस्त— तो मैं उन्हें कच्चा ही चबा जाऊँ।

नायब— बहुत गूब, और तुम मियाँ कमरद्दीन !

कमरद्दीन— क्या मैं ? मैं उन्हें इतनी गालियाँ दूँ, इतनी गालियाँ दूँ कि बच्चूजी को छट्टी का दूध ही याद आजाय।

नायब— यह भी ठीक है। तुम्हारे जैसे बहादुर मुसाहिवों के गाम रहते फिर गम किस बात का ! मगर खैर, एह-नियातन तुमरो तलवार म्यान में बाहर निकाल कर हमारे पास रस दो और बन्दूक-तमंचा भर कर

लेंस कर लो !

खिदमतगार—(तलवार नंगी पास रखकर) जो हुक्म बन्दा नवाज !
(बन्दूक ने गज डालता है) उसमें से मिट्टी निकलती
है।

नायब— वाह, बन्दूक में से मिट्टी कैसे निकली ?

खिदमतगार—दुष्ट, इसमें दीमक ने घर कर लिया है।

पीरवस्ता—दीमक का भी क्या कलेजा है !

कमल्दीन—और अगर गोली लग जाय तो ?

नायब— मियाँ पीरवस्ता, तुम बन्दूक का निशाना लगा सकते
हो ?

पीरवस्ता—दुष्ट, अपने मुँह से क्या कहूँ। एक बार कुत्ते से
हमारी लाग-डाट हो गई। खुदा की कसम, हमसे
कोई ११-१२ फदम पर था। घर के जो बन्दूक
दागता है तो पों-पों करके भागता ही नजर आया।

नायब— (हँसकर) क्या कहने हैं, बड़े ही बहादुर हो !

पीरवस्ता—दुष्ट, इतनी इज्जत न करें, गुलाम जरा इस वक्त
रंज में है—तोचता है कि हुसैनी की माँ.....।

नायब— प्राँह, वह मजे में पुलाव पका रही होगी। हाँ, जरा
बन्दूक देना। (खिदमतगार बन्दूक देता है। उसे उलट-
पुलट कर देखने के बाद धीरे से नीचे रख देता है)

नायब— उड़ती चिड़िया पर निशाना लगा सकते हो ?

पीरवस्ता—हुक्म हो तो आसमान को भून कर रख दूँ ?

नायब— चिड़िया पर निसाना लगाओ।

पीरबक्ष—(रोनी मूरत बना कर घोर जमीन में ठोकर मार कर गजन गाता है)

कया हाल हो गया है, दिले बेकरार का।

भाजार हो किसी को इलाही न प्यार का।

मदाहर है जो रोजे कयामत जहान में।

पहला पहर है मेरी रावे इन्तजार का।

(सूब जोश में लय टोक कर)

इस साल देखना मेरो बहनात के चुलचुले।

साया है भूम-घाम से मौसम बहार का।

(नाचने लगता है)

[एक गिवाही दीरता हुआ घाता है]

गिवाही— हुजूर, दुश्मनों ने परे के परे साफ कर दिए। हमारी फौजें हार कर भाग रही हैं।

नायब— ऐं ? यह कया बदरुलाम जवान पर साया। (मुगादिकों से) कया यह मुमकिन है ?

कमदहीन—हुजूर, कतई नामुमकिन।

नायब— (एक कम पेन्वान का गौरकर) बहो तो मैंने कहा (गिवाही से) खैर तुम जायो।

[गिवाही जाता है]

[दुश्मन परचना गिवाही घाता है]

गिवाही— हुजूर खबर हो गया, दुश्मन की फतह हो गई। वे

इधर हो बड़े घ्रा रहे है । भागिए हुजूर, जान
वचाइए !

[दोनों मुसाहिव घबराकर उठ खड़े होते हैं । घोर-गुल
बढ़ता है । बहुत से सवार नगी तलवारें लिए सब को घेर
लेते हैं]

नायब— .(घबरा कर) म्याँ पीरवह्ला, सम्हालिए जरा, ये
वेमदव गधे सर पर ही चड़े चले घ्रा रहे हैं । लाओ,
हमारी बन्दूक, तमंचा, तलवार !

पीरवह्ला—हुजूर, वक्त पर हमें आजमाइए, पर यह मौका तो
बेढव है ।

नायब— [भागता है]
मियाँ कमरुद्दीन, दागो गोली घर के, उड़ा दो सब
को, भून डालो म्याँ ? बन्दूक लो बन्दूक !

कुमार भीमसिंह—पकड़ लो, गिरफ्तार कर लो, जो लड़े उसके
दो दूक कर दो ।

नायब— किसको ? क्या हमको ? राम —

कमरुद्दीन—हुजूर, अब इन जगलियों को कौन समझाए। अभी कहते हैं, दूर रहो, अदब से बातें करो। वरना नायब साहेब बिगड़ गए तो कयामत वर्षा हो जायगी।

एक राजपूत सिपाही—(सिर पर धोल जमाकर) चलो ठण्डे-ठण्डे।
राणाजी के सामने तुम्हारा सिर काटा जायगा।

[धन्य देते हुए लं जाते हैं]

[पदां गिरता है]

छठा दृश्य

[स्वान—राणा राजसिंह की छावनी : राणा और कुले हुए घरदार मुड़-भंगरा कर रहे हैं]

राणा— हाँ तो अब बादशाह की दूसरी मुड़-योजना यह है कि शाहजादा आजम खिलीफ से देवारी और उदयपुर होता दुष्मा पहानों में बड़े, इसी तरह शाहजादा मुग्रज्जम राजनगर और धरुवर देगुरी से ?

गोपीनाथ राठीर—जो ही धन्यदाता !

राणा— बहुत ठीक। धरुवर अब सोजत में मुहोम है ?

गोपीनाथ राठीर—जो ही।

राणा— यहाँ से यह एक सेना नाटोल होकर तद्दुर्गों की कमान में देगुरी के पाटी से मेवाड़ में भेजेगा और

पहिले कुम्भलमेर पर आक्रमण करेगा ।

गोपीनाथ राठौर—जो हाँ, वही राठौरों की सेना पड़ी हुई है ।
 राणा— हम आसा करते है कि तहञ्चुर एक मास से पूर्व
 नाडोल न पहुँच सकेगा । आप तुरन्त कुम्भलमेर
 अपनी सेना सहित मोर्चा दुस्त कीजिए और दुर्गा-
 दास को मदद कीजिए । विक्रम सोलंकी और
 मोहकमसिंह शक्तावत आपके साथ रहेगे । पर
 सवरदार रहिए, तहञ्चुर की सेना अकवरकी सेना से
 न मिलने पावे । उसे पहिले ही रास्ते में काट फेंकना
 चाहिए ।

गोपीनाथ राठौर—ऐसा ही होगा ।

राणा— युक्ति ऐसी करनी चाहिए कि आप तीनों सेनापति
 मार्ग में एक-दूसरे के नजदीक ही छिप रहें । हाँ,
 विक्रमसिंहजी के पास दो हजार सवार हैं ?

विक्रमसिंहजी—जो हाँ ।

राणा— बहुत ठीक, आप पहाड़ पर न चढ़ सकेंगे । आप सब
 से पीछे रहें और कही समतल भूमि पर जंगल में
 छिप रहें । धूर्त मुगल धरती सूँघते बढ़ेंगे । उन्हें
 हमारा भय छाया है । सम्भव है, आपको पा जाय
 तो आप नाम मात्र को लड़कर पीछे हट जाइए ।
 जब शत्रु आगे बढ़ जाय, तो उसकी पीठ तोड़ने को
 तैयार रहिए ।

विक्रमसिंहजी—ऐसा ही होगा ।

राणा— और घाय गोपचन्द्रजी, दरें के सब से सखरीले रास्ते पर दबकर बैठ जाय । मोहकमसिंहजी बीच में छिपे रहेंगे । शत्रु से कुछ छेड़छाड़ न करेंगे । ज्योंही शत्रु दरें के मोर्चे पर पहुँचे, घाय काट घुस कर दें । बगल से पहाड़ीबाज की तरह भागकर मोहकमसिंहजी जनेऊमा हाथ मारेंगे और पीछे से विक्रमसिंह । दुश्मन वहीं कट भरेगा ।

तीनों— ऐसा ही होगा महाराज ।

राणा राजसिंह—सकबर की असफलता मुनकर साधार वादनाह स्वयं सजमेर से चल पड़ेगा । हमें मालूम है, उसके पास फौज बहुत कम है । यहाँ की तमाम फौज बेतरतीबी से बिसरी हुई है । यह जल्दी और गुस्ते में देश में घुमता ही जायगा । हम उसे पीजरे में फांग कर ततम कर देंगे । भय जाइए, घाय सपनी योजना काम में लाइए ।

सब— जैमी घामा । [गव जां है]
[पर्दा बदलता है]

सानवी दृश्य

[स्थान — उदय सागर : वादनाह श्री एखनी : बीच में वादनाह का पीना है । गन्त से पहले पर है । वादनाह मगनद पर बैठे है । धनोर धव न-बनन है ।]

बादशाह— अकबर से मुझे ऐसी उम्मीद न थी। उस नामुराद ने अपना नाम डुबोया।

तहब्युरखाँ—जहाँपनाह, शाहजादा जो कुछ कर सकते थे वह उन्होंने किया। मगर उन्हें बंगाल और दक्षिण की शाही फौज की मदद नहीं मिली।

बादशाह— इसके लिए कौन जिम्मेदार है ?

तहब्युरखाँ— हुजूर मदद मिलना मुमकिन ही न था, राना बीच में इस चालाकी से जम कर बैठा कि लाचार शाही फौज सिकुड़ी बँठी रही। केमार जयसिंह ने आधी रात को एकाएक फौज पर दूट कर शाहजादे की तमाम फौज को काट डाला।

बादशाह— काट डाला ! शाही फौज गोया भूली थी।

तहब्युरखाँ— हुजूर, उसे न रसद मिलती थी न कुमुक। बहसत और घवराहट से उसकी हिम्मत पस्त हो चुकी थी।

बादशाह— तो शाहजादा अकबर अब गुजरात की ओर गया है।

तहब्युरखाँ— ओ हाँ, जहाँपनाह, उनकी तमाम फौज बर्बाद हो गई है। उधर शाहजादा आज बड़ी मुमोजत में है।

बादशाह— उन पर कौसी मुसीबत आई है ?

तहब्युरखाँ— वे पहाड़ी इलाकों में जहाँ तक पहुँच चुके हैं, वहाँ से आगे बढ़ने का रास्ता ही नहीं है। घोड़े, जँट, तोपखाना आगे एक कदम भी बढ़ नहीं सकता।

वहाँ न रसद है न पानी, न दुश्मन, जिनसे लड़ा जाय । साहसादा ने कुछ पैदल घोर चुने हुए सवार लेकर घाटियों के रास्ते भीतर घुसने की कोशिश की थी मगर ज्योंही घाटियों में घुसे ऊपर से राणा की छिपी हुई फौज बड़े-बड़े पत्थर बरसा कर फौज की चटनी बना देती है । उनकी हालत ऐसी ही है जैसे कोई कुत्ता बावर्चीखाने का बन्द दरवाजा भड़भड़ा कर फिर वापस लौट जाता है, भीतर नहीं घुस पाता । ऊपर मौज्जमसाह कांफ़-रोली में घटके पड़े हैं ।

बादशाह— किसलिए ?

तहमुरसा—पहले तो उनको फौजों को भागे बढ़ने को राह ही नहीं है । दूसरे, वह रास्ता बनाकर भागे बढ़े भी तो एक तो यह बहुत ही मुश्किल काम है । दूसरे, उन्हें बड़ा भारी एक गतरा है ।

बादशाह— गतरा क्या है ?

तहमुरसा—यह, कि अगर पोंछे से रात्रपूनों ने उनको रगद का रास्ता रोक दिया तो कैसा बीतेगी ? राणा ने इस चालाकी घोर टोनिवारो ने अपने पड़ाव डाले हुए हैं कि बगान घोर दमिन्न की चाही फौजें भीगे बन्दर की तरह निरुद्ध कर बंटी रही घोर मुलगान को फौज नदरनाबूद होगई । कुछ भी मदद न मिल

मकी । अब गहनसाह जैसा मुनासिब समझें, हुकम दें ।

बादशाह— तुम अभी अपनी फौज के साथ कूँच करके अकबर को वापस लाकर चित्तौड़ में द्यावनी डालो । हम खुद इस बार मुल्क के भीतरी हिस्से में घुसंगे और देखेंगे कि राना में कितना जोर है ।

तहव्युरखाँ—जो हुकम बन्दा नेवाज ।

[पर्दा बदलता है]

[जाता है]

आठवाँ दृश्य

[स्थान—मुगलों का पड़ाव · साहजादा अकबर और तहव्युरखाँ : समय—प्रातःकाल]

तहव्युरखाँ—साहजादा, अब कहिए क्या किया जाय ?
अकबर— मेरा खयाल है, कुछ भी नहीं किया जा सकता । हम लोग पूरी तौर पर हार गए हैं और हमारी फौज बिलकुल बर्बाद हो गई है ।

तहव्युरखाँ—राजपूतों की जर्बामर्दी, बहादुरी और मुस्तंदा की जितनी तारीफ की जाय, थोड़ी है । मैं एक बात सोचता हूँ ।

अकबर— कौनसी बात ?

तहव्युरखाँ—मैं सोचता हूँ कि अगर यह बहादुर कीम हमारी

मकबर— तो मैं क्या करूँ ?

भाजम— जो ठीक समझो । बादशाह बहुत नाराज हैं ।

[जाता है]

मकबर— मुना तुमने तहखुर ! भाजम ने सड़कर शिकस्त खाई है । धर्म नहीं आती, बेगम तक कँद कर ली गईं । मगर समझ गया, भाजम ने मेरे खिलाफ भ्रवा की भरा है ।

तहखुरगी—देखा नहीं, कँसी टेढ़ी नजर से देखते थे ।

मकबर— तुम राजपूतों की मदद को क्या कहते थे—कहो !

तहखुरगी—घाय उनकी मदद खरीदने को राजी हैं ।

मकबर— खरीदने को ?

तहखुरगी—नहीं तो क्या, घाय नहीं तो भाजम, मुघज्जम कोई न कोई तो खरीदेगा ही ।

मकबर— (आश्चर्य में) यह न होने पाएगा । मैं यह मदद खरीदूँगा ।

तहखुरगी—चाहे जिन कीमत पर ?

मकबर— चाहे जिन कीमत पर । तुम राजपूतों में बातें करो ।

तहखुरगी—मैं बात कर चुका हूँ शाहजादा ! मगर एक घंटे ?

मकबर— फंसा घंटे ?

तहखुरगी—घाय बादशाह होंगे तो—बन्दा पञ्जीर-ए-भाजम होगा ।

अकबर— मैं मंजूर करता हूँ ।

तहबुर्खा—तो अब आप आराम करें । मैं सब ठीक-ठीक कर
 लूँगा ।

[पदां बदलता है]

नवाँ दृश्य

[सन—राणा की छावनी : महाराणा और उनके सामन्त बातें कर
 रहे हैं । मेना पड़ाव जाने पड़ी है : समय—प्रातःकाल ।]

गोपीनाथ राठौर—अन्नदाता की जय हो ! प्रवल प्रतापी मुगल
 बादशाह आलमगीर देवरी की घाटी में अपनी
 तमाम सेना सहित फँस गया है । अब क्या आज्ञा
 होती है ?

राणा— धन्य है आपकी वीरता और तत्परता, विस्तार से
 कहो, कैसे क्या हुआ ।

गोपीनाथ राठौर—महाराज, हमारे एक चर ने मार्गदर्शक होकर
 बादशाह को घाटी में ला फँसाया । इस पर
 बादशाह अपनी तमाम फौज, खजाना लिए मेवाड़
 को जड़-मूल से रौंदने के इरादे से चला था । सब
 से धामे रास्ता दुरुस्त करने वाली फौज थी । उनके
 पाम हथियार गंड़ाता, फावड़ा और कुदाली थे । ये
 लॉग दरस्त काटते, गड़े पाटते, रास्ता बनाते बढ़

और धीच में कुमार जयसिंह की सेना मिले तो उसे कुचल डालें। फिर दोनों फौजें मिलकर उदयपुर में घुस पड़े और राज्य को तहस-नहस कर डालें। पर जब उसको नजर घाटी के बगल की पहाड़ियों पर चढ़ी राजपूत सेना पर पड़ती उसके होश उड़ गए। वह तुरन्त समझ गया कि बगल में दुश्मन को छोड़ कर आगे बढ़ना बड़े खतरे का काम है। वह घबराया घब पलट कर लड़ भी नहीं सकता था। क्योंकि उस तग दरें में फौज को पलट कर युद्ध के लिए तैयार करना सम्भव ही न था। न उतना बख ही था। उसे भय था कि ज्योंही फौज को घुमाया जायगा, राजपूतों की सेना उस पर दूट पड़ेगी और घानन-फानन में उसकी फौज के दो टुकड़े हो जाएंगे और तब एक हिस्से की बड़ी ही आसानी से काट डाला जायगा।

राणा— उसका यह सोचना बिलकुल ठीक था। इसके बाद क्या हुआ ?

गोपीनाथ राठौर— नामने जयसिंह की सेना का भय था। आगे बढ़ना सम्भव न था थोड़े रसद लुटने का खतर था। लौटने का भी कोई उपाय न था। बादशाह सेना को गति रोक कर विमूढ़ हो बैठा।

राणा— विमूढ़ होना ही था।

गोपीनाथ राठौर—निरुपाय उसने हमारे भेदिए की शरण ली। और उसे उदयपुर का नया मार्ग खोजने को कहा। वह बादशाह को उसी सँकरोले दरें में घुमा ले गया, जहाँ हमारी तमाम मोर्चे-बन्दी तैयार थी, बादशाह ने सेना को लौटाने का हुक्म दिया, पर उसका सिलसिला उल्टा हो गया। सेना का पिछला हिस्सा पहले दरें में घुसा।

राणा— (हँसकर) यह बिना मौत मरना हुआ।

गोपीनाथ राठौर—महाराज! बादशाह ने हुक्म दिया कि तम्रू और फालतू चीजें उदयसागर के रास्ते जायें। वह सेना-पति तल्लुखी को आगे करके, पैदल सिपाहियों और तोपखाने को लेकर दरें में घुस पड़ा। उसके घुसते ही हम चीते की भाँति छलांग मारकर उस पर दूट पड़े और क्षणभर में फौज के दो टुकड़े हो गए। उनमें का एक टुकड़ा तो बादशाह के साथ दरें में घुस गया, दूसरा हमने सामने होकर काट डाला। यह वह भाग था, जहाँ बेगमात थीं। वह बुहराम मचा कि जिसका नाम। अहदी जो बेगमों की रक्षा के लिए तैनात थे, कोई हथियार न चला सके। सब बेगमात, सारा सजाना और रसद हमारे कब्जे में आ गई। बादशाह दरें में घिर गया। दरें के उस पार कुमार जयसिंह की चीन्ही है। इन पर विक्रम-

सिंह का धाना है। पहाड़ की चोटियों पर ५० हजार भील भारी-भारी पत्थरों को इकट्ठा किए— तोर-कमान लिए श्रीमानों की यात्रा की प्रतिक्षा में है। ग्राममगोर भूरा, प्यासा भ्रमहाय दरें में रुंद है।

राणा— बाह, यह अगाध्य साधन हुआ।

गोपीनाथ राठौर—(हाथ जोड़कर) महाराज, अब दो बातें विचार-एंग्य हैं। पहिली बात वेगमात के सम्यन्ध में है। उनका क्या किया जाय।

राणा— उन्हें घादरपूर्वक सभी महलों में भेज दिया जाय और महारानी चारुमती को उनकी पहनाई करने दी जाय। इसके लिए हम अलग पत्र महाराणी को लिखेंगे। साध-सामग्री जो अपने काम की न हो, दुसाध और डोमों को लुटा दी जाय और लूटा हुआ राजाना दोंवानजो के गुपुदं कर दिया जाय।

गोपीनाथ राठौर—जो यात्रा, ऐगा ही होगा। [जाता है]
[पर्दा बदलता है]

दमवां हरय

[रान—घराजती का तब दर। बाग्नाही और बेरलीबी ने परे-गान ही पीरे-पीरे दइ रही है। बाग्नाह एक पीरे पर मार है। पुत्र मारं परेगान दर-उर वन रहे है। गनय-गन्धा:गान।]

अलीगोहर—हुजूर, नूरज इव गया। दरें में खीफनाक अंधेरा
 : बढ़ रहा है। हमारे पास रोजनों का कुछ भी बन्दो-
 बस्त नहीं है। आगे बढ़ना मुश्किल है।

बादशाह—इस खीफनाक दरें के दूसरे मुहाने का पता लगा ?

अलीगोहर—ठीक-ठीक नहीं, क्योंकि वहाँ तक पहुँचने का रास्ता
 नहीं है। प्यादे और सवार ठसाठस भरे हैं। मगर
 मालूम होता है, मुहाना कटे दरख्तों और पत्थरों से
 बन्द कर दिया गया है और उधर जयसिंह की फौज
 लड़ने को मुस्तैद खड़ी है। उधर एक तो बाहर
 निकलने की गुञ्जाइश ही नहीं, क्योंकि रास्ता साफ
 करने वाली फौज हमसे कटकर पीछे पड़ गई है।
 फिर निकलने पर एक भी आदमी जिन्दा न बचेगा।
 पहाड़ी पर चींटियों की मामिन्द भील फिर रहे हैं।
 ज्यों ही हमने आगे कदम बढ़ाया कि भारी-भारो
 पत्थर और तीर हमारा भुरता निकाल देंगे।

बादशाह—यहाँ रात काटना भी मौत को गले लगाना है।
 मगर मजबूरी है। यहीं पड़ाव डाला जाय।

अलीगोहर—हुजूर, डेरा-तम्बू तो सब लुट गए। होते तो गाढ़ने
 को यहाँ जगह नहीं। बस, यही होगा कि जो जहाँ
 है, खड़ा रहे ! हुजूर, इस पत्थर को चट्टान पर
 माराम करे।

बादशाह—मगर घोड़ों और सिपाहियों की रसद का क्या होगा ?

अलीगोहर—दुबूर, इस दरें में न एक बूँद पानी—न एक तिनका
घास । महज पत्थरों के छोटे-बड़े ढोके हैं । सिपाही
चाहें तो उन्हें पेट से बांध कर रात काट सकते हैं ।
[एक प्यादा कठिनाई से घाता है]

प्यादा— खुदायन्द, दुश्मनों ने वेगमात, खजाना, तोपखाना
घौर रसद लूट ली है । घौर घ्राधी फौज जो दरें से
बाहर रह गई थी, काट फंसी । अब दुश्मन मुस्तैदी
से दरें का मुँह रोके बैठा है । वहाँ उसने हमसे
छोना हुमा तोपखाना लगा रखा है ।

यादशाह— (माथा पीटकर) या अल्लाह, आज तूने आलमगीर
को यह दिन दिखाया । आज जोता बचा तो
समझूँगा ।

अलीगोहर—जहापनाह, यहाँ से जोते निकलने की कोई तरकीब
नजर नहीं आ रही है ।

बादशाह— (गुस्से से हाँड बजाकर) जैसा गुदा की मर्जी, फिलहाल
जंगे मुमकिन हों यह रात काटी जायगी । जो इन्त-
जाम मुमकिन है, करो । मैं जरा नमाज पढ़ूँगा ।
[घोड़े से उतर कर नमाज पढ़ता है]

[पर्दा गिरता है]

ग्यारहवाँ दृश्य

: [स्नान—राणा की छावनी : चुने हुए सरदार और राणाजी बातें कर रहे हैं । समय—दोपहर ।]

राव केसरोसिंह—श्रीमान् ! पेट की आग से जलकर मुगल शहन्शाह नरम होगया है । उसने मुलह का पैगाम भेजा है ।

कुमार भीमसिंह—उसकी बात का क्या विश्वास ? नहीं, इस बार उसे सबंधा नष्ट कर दिया जाय । वह मही भूख प्यास से तड़प-तड़प कर मरे । मर जाने पर हम डोमों के हाथों से उसे गौर दिला देंगे ।

राणा— (हँसकर) इस समय यह तो बहुत आसान है कि उसे यहीं मुखा-मुखा कर मार डाला जाय परन्तु श्रीरंग-जेव के मरने से मुगल-शक्ति का नाश नहीं हो जायगा, उसके बाद इसका बेटा बादशाह होगा, उसकी मात-हती में दक्षिण की विजयिनी सेना इसी पड़ाव के उस पार पड़ी हुई है । और भी उसको दो विशाल सेनाएँ मेवाड़ के अंचल पर अभी मुकीम हैं । इन सबको क्या हम नष्ट कर सकते हैं ? उनसे हमें आज नहीं तो फिर कभी मुलह करनी होगी । जब मुलह करनी है तो उसके लिए यही सबसे अच्छा अवसर है । फिर ऐसा अवसर हमें नहीं मिलेगा ।

मन्त्री दयालशाह—मन्नदाता, और कुछ न मिले, पर यह महा

पापो तो मरे ।

राणा— मुगल साम्राज्य को यों ही नहीं उखाड़ा जा सकता ।
हमें अपनी शक्ति पर भी विचार करना चाहिए ।

मन्त्री दयालशाह—परन्तु महाराज, इसी बात का क्या भरोसा
है कि बादशाह सन्धि की शर्तों का पालन करेगा ?
वह बड़ा ही भ्रूण-...

सतरे से ...

राणा— ^{कथन—(देखिए)} क्या मेरी बादशाह की बेगम, विलम
भ्रूण-... है वह पुस्तकाली ! गुदा को कयम, मैं इसे घर-
बाहर नहीं कर सकती ।

बाधमती— बादशाह की बेगम जब यों तब थीं पथ मेरी बाँधी
तो, पटपट विलम भरो ।

उदयपुरी बेगम—तुम्हारा इतना मरुदूर.....

बाधमती— गुण, पदव से बात कर ! आज तुन हमारी चित्तम
भरो । कल बादशाह घालमगौर राणा का उगाल-
दान उठायेगा । (निर्मला ने) इस बाँधी को लेजा ।

निर्मला— उठो, वह चित्तम-तमागू पीर प्राण है ।

उदयपुरी बेगम—तुम सब कथ्यश्यों को सजा मिलेगी । मे
उदयपुर का नामोनिशान मिटा दूंगी ।

चारमती— मैं चाहती थी कि तुम्हारे साथ भलमनसाहत मे
प्राज्ञ मगर तुम्हारे इन गुरुर ने मेरी कोमन व
नष्ट हो गई । महाराणा ने बादशाह को जी
शिया घोर त्म क्यको भी जाने का दृवम

राणा— सौदा करना व्यर्थ है। बादशाह सन्धि की शर्तें स्वीकार करे, तो वेगमात छोड़ दी जावेंगी।
[पर्दा बदलता है]

९० वाग्द्ववां दृश्य

भरो और चली जायाँ ! चारुमती एक गद्दी पर उदयपुरी वेगम—(रो कर) मैं तमासू भरना नहीं जा.....
चारुमती—(निर्मला से) किसी वादी से कह कि इन्हें तमासू भरना सिखा दे।

[दो-तीन वादी निर्मला के इशारे से घाती हैं]
वादी— चलो, उठाओ चिलम !

उदयपुरी वेगम—(तकदीर पर हाथ धर कर) हाय किस्मत !
[तमासू भरती है]

वादी— जाओ वेगम ! आलमगोर से तमाम हाल कह देना।
[वेगम चुपचाप जाती है]

चारुमती—(निर्मला से) ला अब शाहजादो को।
[निर्मला जाती है]

चारुमती— इस भीरत की बहुत तारोफ सुनी है। सुना है रंग-महल में इसी की तूती बोलती है।
[शहजादी घाती है]

चारुमती— (उठकर मसमती कुर्नी की ओर इशारा करके) बैठिए शहजादी !

जेबुन्निसा—(बंठ कर) शुक्रिया, आप भी तशरोफ रखिए,
महारानी !

चारुमती—(बंठ कर) शाहजादो को बहुत तकलीफ हुई होगी ।
यहाँ न दिल्ली के रंगमहल के सामान, न सुविधाएँ ।

शाहजादो—आप एक कैदो को इस कदर खातिर करती हैं,
महारानी ! जहाँ आप हैं, वहाँ क्या नहीं है ।

चारुमती—आप कैदो नहीं हैं, शाहजादो हैं । कहिए, मैं आपकी
क्या सेवा कर सकती हूँ ।

शाहजादो—आपकी शराफत में नहीं भूलूँगी । कहिए, आपको
कुछ सिदमत भी बजा ला सकती हूँ ।

चारुमती—बहुत कुछ । यदि आप सहनशाह को यह समझा दें
कि सहनशाह अपने मुल्क का मा-बाप होता है और
उनकी रियाया उनकी ओलाद । चाहे वे हिन्दू हों
या मुसलमान—उन्हें एक ही नजर से देखना
उनका धर्म है ।

शाहजादो—महारानी, सल्तनत की पेचीदगी और उलझनों
बादशाहों से बहुत से ऐसे काम करा देती हैं जिन्हें
शब लोग नहीं समझ पाते । ताहम, मैं आपके लया-
सात को दाद देती हूँ ।

चारुमती—(निमंनाने) शाहजादो को इत्र-पान दे ।

[इत्र-पान देकर विदा करती है]

[पदां गिराए]

